विवेक-शिखा

श्रीरामकृष्ण-विवेकानन्द भावधारा की एकमात्र हिन्दी मासिकी

वर्ष–१७ जून–१९९८ अंक–६

रामकृष्ण निलयम्,
जयप्रकाश नगर, छपरा (बिहार)

विवेक शिखा के आजीवन सदस्य

१५५. श्री विजय कुमार मल्लिक—मुजफ्फरपुर
१५६. श्रीमती गिरिजा देवी—बक्सिया (बिहार)
१५७, श्री अशोक कौशिक-मालवीय नगर, (नई दिल्ली)
१५८. रामकृष्ण मिशन विद्यापीठ—देवघर (बिहार)
१५९. श्री रामकृष्ण साधना कुटीर, खण्डवा (म० प्र०)
१६०, श्रीमती आभा रानाडे, अहमदाबाद (म० प्र०)
१६१. श्री डी० एन० थानवी, जोधपुर (राजस्थान)
१६२. श्री मोहन लाल यादव, नाहर कटिया (आ०)
१६३ डा० (श्रीमती) रेखा अग्रवाल, शाहजहाँपुर(उ प्र.)
१६४. डॉ० (श्रीमती) सुनीला मल्लिक—नई दिल्ली
१६५. श्रीरामकृष्ण संस्कृतिपीठ, कामठी (नागपुर)
१६६. कुमारी जसवीर कौर आहूजा, पटियाला, पंजाब
१६७. श्रीमती मंजुला बोर्दिया, उदयपुर (राजस्थान)
१६८, श्रीमती सुदेश, अम्बाला शहर (हरयाणा)
१६९. डॉ० अजय खन्ना (बरेली उ० प्र०)
१७०. श्री एस० टी पुराणिक—नागपुर
१७१. श्री धन्नालाल अमृतलाल सोलंकी, कलवानी
१७२. डॉ० कमलाकांत, बड़ोदा (गुजरात)
१७३. डॉ० विनया पेण्डसे, उदयपुर (राजस्थान)
१७४. सन्तोष बोनी, रामवन (जम्मू एवं कश्मीर)
१७५. श्री राजोभाई बी० पटेल, सूरत (गुजरात)
१७६. श्री प्रकाश देवपुरा—उदयपुर (राजस्थान)
१७७. श्री एस० के० मुन्दरा, जामनगर (गुजरात)
१७८. डॉ० मोहन बन्सल, आनन्द (गुजरात)
१७९. अडकिया कन्सलटेन्ट्स, प्रालि० मुम्बई
१८०. सुश्री एस० पी० त्रिवेदी—रोजकोट (गुजरात)
१८१. अद्वैत आश्रम, मायावती—(उ० प्र०)
१८२. श्री शत्रुघ्न शर्मा, फतेहाबाद—(बिहार)
१८३. रामकृष्ण मिशन, शिलांग—(मेघालय)
१८४. श्री त्रिभुवन महतो, राँची—(बिहार)
१८५. रामकृष्ण मिशन आश्रम, राँची—(बिहार)
१८६. श्री आर० के० चोपड़ा, इलाहाबाद—(उ० प्र०)
१८७. श्री श्यामनन्दन सिंह, राँची - (बिहार)
१८८. श्री डी० आर० साहू, रायपुर—(म० प्र०)
१८९. रामकृष्ण मिशन स्कूल, नरोत्तमनगर (अरुणाचल प्र.
१९०. रामकृष्ण मिशन हॉस्पिटल, इटानगर (अरु० प्र०)
१९१. रामकृष्ण मिशन स्कूल, अलाँग (अरु० प्र०)
१९२. श्री घनश्याम चन्द्राकर, औंधी (म० प्र०)
१९३. श्री भास्कर मढ़रिया, भिलाई (म० प्र०)
१९४. स्वामी चिरन्तनानन्द, रा.कृ.मि.नरोत्तमनगर (अ.प्र.
१९५. श्री हरवंश लाल पहडा, जम्मूतवी (कश्मीर)
१९६. श्री योगेश कुमार जिन्दल, विवेक बिहार (दिल्ली)

इस अंक में

		पृष्ठ
१. श्रीरामकृष्ण देव ने कहा है		१
२. विवेक गीति	विदेह	२
३. अप्प दीपो भव	संपादकीय सम्बोधन	३
४ अग्नि वीणा	स्वामी विवेकानन्द	८
५. आशीर्वाणी	श्रीमत् स्वामी भूतेशानन्द जी महराज	९
६. साधना की प्रतिक्रियाएँ	स्वामी यतीश्वरानन्द	११
७. दोष-दर्शन	स्वामी आत्मानन्द	१४
८. देश भक्त बनो !	डॉ० किरण वेदी	१६
९. शताब्दी का अंतिम महाकुम्भ मेला (रपट)		२२
१०. हरद्वार में साधु सम्मेलन (रपट)		२६
११. सेवा	स्वामी विवेकानन्द	२८
१२. बोधकथा		२९
१३. देहरादून में रामकृष्ण मन्दिर का उद्घाटन (समाचार)		३०

उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत
उठो जागो और लक्ष्य प्राप्त किये बिना विश्राम मत लो।

विवेक शिखा

श्रीरामकृष्ण-विवेकानन्द-भावधारा की एकमात्र हिन्दी मासिकी

वर्ष—१७ जून—१९९८ अंक—६

इष्टदेव का हृदय-कमल में रूप अनूप दिखा। निजानन्द में रखती अविचल विमल 'विवेक शिखा'॥

सम्पादक :

डा० केदारनाथ लाभ

सहायक सम्पादक :

ब्रजमोहन प्रसाद सिन्हा
शिशिर कुमार मल्लिक

सम्पादकीय कार्यालय :

विवेक शिखा
रामकृष्ण निलयम्
जयप्रकाश नगर
छपरा—८४१३०१
(बिहार)
फोन : ०६१५२-२२६३९

सहयोग राशि :

आजीवन सदस्य—	७०० रु०
वार्षिक—	५० रु०
रजिस्टर्ड डाक से	६५ रु०
एक प्रति—	५ रु०

रचनाएँ एवं सहयोग-राशि संपादकीय कार्यालय के पते पर ही भेजने की कृपा करें।

श्री रामकृष्ण ने कहा है

(१)

पका हुआ साबूत आम भगवान् के भोग में और अन्य सभी कामों में आ सकता है; पर वह अगर कौए के द्वारा ठुनका हुआ हो तो किसी काम में नहीं आता। ऐसा दागी फल न तो देवता के भोग में चढ़ता है, न ब्राह्मण को दान दिया जा सकता है और न स्वयं के खाने के काम में लाया जा सकता है। इसीलिए पवित्र हृदय बालकों और युवकों को धर्म मार्ग पर ले जाने का प्रयत्न करना चाहिए, उन्हें भगवान् की सेवा में लगाना चाहिए, क्योंकि उनके मन में विषय वासना की कालिमा नहीं लगी होती। अगर मन में एक बार विषय बुद्धि प्रवेश कर जाए या विषय भोगरूपी विकट राक्षस की विकराल छाया पर जाए, तो फिर उसे परमार्थ पथ पर ले जाना अत्यन्त दूभर हो जाता है।

(२)

भगवान् चीनी के पर्वत के समान हैं। एक छोटी चींटी उसमें से चीनी का एक छोटा कण ले जाती है, तथा उससे बड़ी चींटी कुछ बड़ा कण। किन्तु फिर भी चीनी का पर्वत जैसा का वैसा ही बना रहता है। भगवान् के भक्त चींटियों के समान हैं। भगवान् के एक ही दिव्य भाव को पा वे आनन्द में विभोर हो जाते हैं। उसके समस्त ऐश्वर्यों एवं भावों की कोई भी अपने भीतर धारणा कहीं कर सकता।

(३)

जिसके पास विश्वास है, उसके पास सब कुछ है, जिसके पास विश्वास नहीं, उसके पास कुछ भी नहीं। भगवान् के नाम पर विश्वास हो तो असम्भव सम्भव हो सकता है। विश्वास ही जीवन है और अविश्वास मृत्यु।

विवेक-गीति

—'विदेह'
रायपुर (म० प्र०)

(१)

(यमन—कहरवा)

श्रीरामकृष्ण चरणारविन्द,, मधुपान निरत सानन्द,
हे नर-नारायण के पूजक, आचार्य विवेकानन्द।
हे योगीश्वर हे ज्ञान सिन्धु, हे भक्तराज हे दीनबन्धु,
सागर समाधि के स्नातक हे, सच्चित् स्वरूप सुखकन्द ॥
हे जगज्जयी, हे जगपालन, हे जगसेवक, हे जगजीवन,
युगधर्म यंत्र के वादक हे, नव राग ताल नव छन्द ॥
पूरब की प्रज्ञालोक लिए; तुम पश्चिम जाकर उदित हुए,
अज्ञान तिमिर भय नाशक हे, आदित्य सतेज अमन्द ॥
सेवा का अभिनव मंत्र दिया, जनमन को शुद्ध स्वतंत्र किया,
प्रज्ञा का विखराया तुमने, सुन्दर सुवास मकरन्द ॥

(२)

(कौशिया—कहरवा)

वीरेश्वर शिव उतरे भू पर; लेकर रूप विवेकानन्द।
शान्ति प्रतिष्ठा होगी जग में, मिट जायेंगे भय-छल-छन्द ॥
त्रिविध शान्ति का कर त्रिशूल धर, वेद वृषभ पर आराहेण कर।
चतुर्योग का डमरु बजाते, विचरण किया विश्व सानन्द ॥
ज्ञान-जाह्नवी सिर से उतरी, शत-शत धाराओं में बिखरी।
हर हर हर कल कल ध्वनि करती, हरती धरती के दुःख द्वन्द्व ॥
मोचन करते जन लोचन-जल, पीते रहे सतत हालाहल।
सबको मुक्तिमार्ग दिखलाया, लोग धन्य कृतकृत स्वच्छन्द।
बीरेश्वर शिव उतरे भू पर, लेकर रूप विवेकानन्द ॥

सम्पादकीय सम्बोधन

अप्प दीपो भव

मेरे आत्मस्वरूप मित्रो,

वह वैशाख की पूर्णिमा थी। सूरज की आग बरसाती प्रखर किरणों के बीच पंचाग्नि तपस्या कर दिन अपना आसन समेट चुका था। संध्या उतर आयी थी। ग्रीष्मेषु संध्या। ग्रीष्म की संध्या। दिन के ताप-तप्त प्राणियों में शीतलता की करुणा बरसा रही थी। ऊपर नीचे आकाश में पूर्णिमा का चन्द्रमा अपने असीम प्रेम की किरणों का वितान फैला चुका था। नीचे मलय-समीर के झोंकों से तरु-लताएँ झूम रही थीं। वन-फूल अपनी सुगंध से निश्छल समर्पण का साम-संगीत बिखेर रहे थे। 'ॐ मणिपद्मे हुम्' ....'ॐ मणिपद्मे हुम्'.....ॐ मणिपद्मे हुम्—पेड़ों के पत्तों की मर्मर ध्वनि जैसे मंत्रोच्चार कर रही थी। प्रकृति—पूरी प्रकृति ही प्रार्थना में झुकी किसी मुक्त वसना पुजारिन की भाँति लग रही थी। मानो मन में एक मैत्री, मुदिता, उपेक्षा और करुणा की झंकार उत्पन्न कर रही थी।

कुशीनगर। मल्लों का प्रशस्त शालवन। एक वृक्ष के नीचे पद्मासन में बैठे भगवान् बुद्ध—चारों ओर अपने भक्तों और भिक्षुओं से घिरे हुए। अपने अर्धनिमीलित नेत्रों को धीरे-धीरे उन्होंने ऊपर उठाया। होंठों पर एक अनासक्त किन्तु भुवन-विमोहन स्मिति फैल गयी। फिर शान्त-स्थिर और मन्द्र ध्वनि से एक अनाहत संगीत उत्पन्न करते हुए उन्होंने कहा—"मैं अब वृद्ध हो चला हूँ, मेरी यात्रा भी समाप्तप्राय है। मैं अस्सी वर्ष पूरे कर रहा हूँ। मेरे लिए शय्या तैयार करो।"

शय्या लगा दी गयी। बुद्ध उस 'सिंह शय्या' पर दायीं करवट हो सिंह के समान लेट गये—अपनी महा-समाधि के लिए प्रस्तुत होकर। उनके अन्यतम और प्रिय शिष्य आनन्द फूट-फूट कर रोने लगे। वे अबतक अर्हन्त (पूर्ण) नहीं हो पाये थे। बुद्ध ने शान्त मुद्रा में पूछा—"आनन्द, क्यों रो रहे हो? कोई भी हो, चाहे वह तथागत ही हों, मृत्यु को अवश्य प्राप्त होता है। कोई भी हो, सभी संघटित वस्तुएँ विघटनशील हैं। जो वस्तुएँ पैदा होती हैं वे भी आयु को प्राप्त होती हैं, पुनः नष्ट होने के लिए उत्पन्न होती हैं, इस दशा से मुक्ति पाना ही परमानन्द है।"

आनन्द ने कहा—'भगवन्, आपके नहीं रहने से हम आश्रयहीन हो जायेंगे। कौन हमें गहन अँधेरे में दीपक बनकर प्रकाश दिखाएगा?

"अप्प दीपो भव'—तुम स्वयं अपना दीपक बनो। भिक्षुओं को किसी पर आश्रित रहने की कोई आवश्यकता नहीं, वे आत्मा को ही आश्रय समझें, धर्म ही आश्रय है।.....मैंने अपनी आत्मा को अपना आश्रय बना लिया है, मैं तुम्हें छोड़ रहा हूँ और तुमसे बिदा ले रहा हूँ" (दीप निकाय !! १२०)। और बुद्ध ने महासमाधि ले ली।

भगवान् बुद्ध के लीला संवरण के समय की यह बड़ी प्रसिद्ध कथा है।

"अप्प दीपो भव"—तुम स्वयं अपना दीपक बनो, अपने लिए तुम स्वयं अपना आलोक-स्तम्भ, प्रकाशपुंज बनो। कोई दूसरा तुम्हारा प्रकाश-स्तम्भ नहीं बन सकता। तुम्हारे जीवन में चाहे कितना ही घना अन्धकार क्यों न आ जाय, तुम्हें स्वयं अपनी राह पर चलना होगा, अपनी आत्मा के आलोक को जगाना होगा, अपनी आत्मा के आश्रित होना होगा।

"अप्प दीपो भव।" कितना अर्थवान्, कितना प्रासंगिक है भगवान् बुद्ध के द्वारा दिया गया उनका यह अन्तिम उपदेश! यह उपदेश व्यक्ति, समाज और राष्ट्र सबके लिए सार्थक है, सबके लिए मननीय, सबके लिए आचरणीय।

हम जब भी अँधेरे से घिरे होते हैं, बेचैन हो जाते हैं। मन पूछने लगता है—कौन हमें प्रकाश दिखाएगा, कौन हमें गंतव्य तक ले जायगा, कौन हमारा दुःख दूर करेगा, किसके आश्रित हों हम? किन्तु, यह प्रश्न ही गलत है। कोई हमें सदैव प्रकाश नहीं दिखा सकता। कोई हमें हमारे गतव्य तक नहीं पहुँचा सकता। कोई हमारा दुःख दूर नहीं कर सकता। कोई प्रधान मंत्री किसी राष्ट्र का उद्धार नहीं कर सकता। कोई सामाजिक नेता समाज की समस्याएँ दूर नहीं कर सकता। कोई गुरु अपने शिष्य को मुक्त नहीं कर सकता। इसलिए, प्रत्येक युग में गुरु अपने शिष्यों से कहता है—मैं तुम्हें मार्ग तो दिखा सकता हूँ, दिशा-निर्देश तो कर सकता हूँ, प्रकाश की किरणें भी कुछ विकीर्ण कर दे सकता हूँ लेकिन आगे तो तुम्हें स्वयं बढ़ना होगा, विश्वास और श्रद्धा के फूल अपने भीतर तो तुम्हें स्वयं खिलाने होंगे, अन्ततः अपना प्रकाश तो स्वयं विकीर्ण करना होगा।

भगवान् श्रीकृष्ण ने भी अपने प्रिय शिष्य अर्जुन से यही कहा—

उद्धरेदात्मनात्मानं नात्मानमवसादयेत्।
आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः॥

(गीता ६।५)

अर्थात्—'अर्जुन, तुम अपने द्वारा स्वयं अपना उद्धार करो। अपने आपको अधोगति में नहीं ले जाओ, क्योंकि मनुष्य स्वयं ही अपना मित्र और स्वयं अपना शत्रु है। यानी तुम्हारा दूसरा कोई और शत्रु या मित्र नहीं है। यह उक्ति व्यक्ति पर ही नहीं समाज और राष्ट्र पर भी समान रूप से लागू होती है। स्वामी विवेकानन्द कहते हैं—"अपनी आत्मा का अपने उद्योग से उद्धार करो"—यह सब परिस्थितियों में लागू होता है। हम उनकी (दीन दरिद्रों, किसान मजदूरों की) सहायता इसलिए करते हैं, जिससे वे स्वयं अपनी सहायता कर सकें।..... जिस क्षण उन्हें अपनी अवस्था का ज्ञान हो जायगा और वे सहायता तथा उन्नति की आवश्यकता को समझेंगे, तब जानना कि तुम्हारा प्रभाव पड़ रहा है, एवं तुम ठीक रास्ते पर हो।..... किसान और श्रमिक समाज मरणासन्न अवस्था में हैं, इसीलिए जिस चीज की आवश्यकता है, वह यह है कि धनवान

उन्हें अपनी शक्ति को पुनः प्राप्त करने में सहायता दें और कुछ नहीं। फिर किसानों और मजदूरों की अपनी समस्या का सामना और समाधान स्वयं करने दो।"

स्वामी विवेकानन्द की भगवान् बुद्ध में असीम श्रद्धा थी। अमेरिका में किसी ने उन्हें भ्रम से बौद्ध समझ लिया था। उन्होंने तुरंत दृढ़ कंठों से किन्तु नम्रतापूर्वक कहा—"बौद्ध! मैं बुद्ध के दासों के दासों का दास हूँ।"

अनेक विद्वान् बुद्ध और विवेकानन्द में अनेक समानताएँ पाते हैं। हैं भी। लेकिन स्वामीजी ने अपनी तुलना बुद्ध से नहीं की। बौद्ध दर्शन से पूर्णतः सहमत नहीं रहने पर भी दो कारणों से बुद्ध के प्रति उनमें अपार श्रद्धा थी। पहला कारण तो स्वामीजी के शब्दों में ही सुनिए—बुद्ध ही एक व्यक्ति थे, जो पूर्णतया तथा यथार्थ में निष्काम कहे जा सकते हैं। ऐसे अन्य कई महापुरुष थे, जो अपने को ईश्वर का अवतार कहते थे और विश्वास दिलाते थे कि जो उनमें श्रद्धा रखेंगे, वे स्वर्ग प्राप्त कर सकेंगे। पर बुद्ध के अधरों पर अन्तिम क्षण तक ये ही शब्द थे, 'अपनी उन्नति अपने ही प्रयत्न से होगी। अन्य कोई इसमें तुम्हरा सहायक नहीं हो सकता। स्वयं अपनी मुक्ति प्राप्त करो।' अपने सम्बन्ध में भगवान् बुद्ध कहा करते थे, 'बुद्ध शब्द का अर्थ है—आकाश के समान अनन्त ज्ञान-सम्पन्न; मुझ गौतम को यह अवस्था प्राप्त हो गयी है। तुम भी यदि प्राणप्रण से प्रयत्न करो, तो उस स्थिति को प्राप्त कर सकते हो।' (वि सा० सप्तम खण्ड पृ० १९८) और दूसरा कारण यह था कि भगवान् बुद्ध के समान ही एक दूसरे परम पुरुष को उन्होंने अपनी आँखों से देखा था। वे थे भगवान् श्रीरामकृष्ण। बुद्ध के समान ही वीतरागी, सर्वकामनाजयी; बुद्ध के समान ही परम करुणामय, आत्माश्रित; ओर बुद्ध के समान ही जीवन के अन्तिम क्षणों तक लोक मंगल के लिए अपने निश्छल प्रेम का पीयूष और मंगलमय सन्देशों का अमृत बाँट कर सबको गले लगाने को प्रस्तुत। भगिनी निवेदिता ने लिखा है—"In Buddha, he saw Ramakrishna : in Ramakrishna he saw Buddha." (C. W. of Sister Nivedita : vol. 1 Page 175) अर्थात् "उन्होंने (स्वामी विवेकानन्द ने) बुद्ध में श्रीरामकृष्ण परमहंस को देखा और श्रीरामकृष्ण में उन्होंने बुद्ध को देखा।"

स्वभावतः श्रीरामकृष्ण के परम पावन और करुणामय व्यक्तित्व तथा वाणी से सिक्त-अभिषिक्त एवं संदीपित स्वामीजी की वाणी में बुद्ध और श्रीरामकृष्ण के स्वर संगीत सुनाई पड़ते हैं।

"अप्प दीपो भव।" तुम स्वयं अपना दीपक बनो—बुद्ध ने रोते हुए आनन्द से कहा था। वस्तुतः आनन्द के रोने पर बुद्ध ने उन्हें फटकारा था। बुद्ध से प्रकाश मत माँगो, बुद्ध बनो। बुद्ध किसी व्यक्ति का नहीं, परम अनुभूति का नाम है। इस दिव्यानुभूति की चरम अवस्था को कोई भी प्राप्त कर सकता है। बुद्ध का सच्चा शिष्य अंधकार में रोयेगा नहीं। वह स्वय प्रकाशपुंज बनेगा। स्वयं बुद्ध बनेगा। बुद्ध को ऐसे शिष्य की आवश्यकता नहीं, जो बुद्ध को शरीर मानकर, उनकी देह-त्याग के समय रोने लगे। नहीं, उस शिष्य ने बुद्ध को समझा ही नहीं, पहचाना ही नहीं। बुद्ध को ऐसे शिष्यों की जरूरत है जो बुद्ध हो सकें, अर्हंत (पूर्ण) हो सकें।

स्वामीजी भी अपने किसी व्यथित शिष्य को फटकारते हैं—"तुम क्यों रोते हो, बन्धु? तुम्हीं में तो सारी शक्ति निहित है। ऐ महान, अपनी सर्वशक्तिमान प्रकृति को उद्बुद्ध करो; देखोगे, यह सारी दुनिया तुम्हारे पैरों पर लोटने लगेगी। एकमात्र आत्मा ही शासन करती है, जड़-पदार्थ क्या शासन करेगा? अपने शरीर से अभिन्न समझने वाले मूर्ख व्यक्ति ही करुण स्वर से चिल्लाते हैं, 'हम दुर्बल हैं, हम दुर्बल हैं।··· ।"

स्वयं दीप बनने के लिए आवश्यक है हम अपने में श्रद्धा और विश्वास रखें। स्वामीजी ने इसे सिंह गर्जना के साथ लोगों को सुनाया—'वह नास्तिक है जो स्वयं में विश्वास नहीं करता है। पुराने धर्म ने कहा है कि वह नास्तिक है जो ईश्वर में विश्वास नहीं करता। नया धर्म कहता है कि वह नास्तिक है जो अपने-आप में विश्वास नहीं करता।' वे अन्यत्र कहते हैं—"If you have faith in all the three hundred and thirty millious of your mythological gods, and in all the gods which foreigners have now and again introduced into your midst, and still have no faith in yourselves, there is no salvation for you." (III-190) अर्थात् यदि तुम्हे तेतीस कोटि अपने पौराणिक देवताओं तथा उन सभी देवताओं में श्रद्धा है जिन्हें विदेशियों ने तुम्हारे सम्मुख बार-बार प्रस्तुत किया है, और तब भी अपने-आप में श्रद्धा नहीं है, तो तुम्हारे लिए मुक्ति नहीं है।

आत्म-दीप होने के लिए आवश्यकता है सम्यक् आचरण की, असीम दया और प्रेम से परिपूर्ण होकर बहुजन हिताय अपने सुखों की बलि देने की। रोते हुए आनन्द को बुद्ध ने "विश्वास दिलाया कि उनके सभी आरचण सम्यक् रहे हैं और वह शीघ्र ही 'संसार से मुक्त होंगे' अर्थात् अर्हन्त पद प्राप्त करेंगे। इन्होंने आनन्द से भिक्षुओं की संगति में रहने और अपने को नृपों में श्रेष्ठ नृप के समान समझने को कहा।" (गौतम बुद्ध : 'कुमार स्वामी और हॉर्नर : पृ० १२)

स्वामीजी ने भी यही बात अपनी अन्यतम शिष्या भगिनी निवेदिता से कही—"संसार के वीरो को और सर्वश्रेष्ठों को 'बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय' अपना बलिदान करना होगा। असीम दया और प्रेम से परिपूर्ण सैकड़ों बुद्धों की आवश्यकता है।·····संसार को ऐसे लोग चाहिए जिनका जीवन स्वार्थहीन ज्वलन्त प्रेम का उदाहरण हो। वह प्रेम एक-एक शब्द को वज्र के समान प्रभावशाली बना देगा।" भगिनी निवेदिता को उद्बोधित करते हुए स्वामीजी आगे लिखते हैं—"मेरी दृढ़ धारणा है कि तुममें कुसंस्कार नहीं हैं। तुममें वह शक्ति विद्यमान है जो संसार को हिला सकती है·····। महामना, उठो! उठो! संसार दुःख से जल रहा है। क्या आप सो सकती हैं? हम बार-बार पुकारें जब तक सोते हुए देवता न जाग उठें, जब तक अन्तर्यामी देव उस पुकार का उत्तर न दें।" (पत्रावली : पृ० ४५०-५१)।

आत्मदीप बनने के लिए सम्यक् चरित्र के निर्माण की, मनुष्यत्व की प्राप्ति की, निस्वार्थता और प्रेम की उपलब्धि की यात्रा हमें करने होगी। गुरु संकेत करेंगे। यात्रा हमें स्वयं करनी होगी। स्वामीजी एक किस्सा सुनाया करते थे—

एक निकम्मा भिखमंगा सड़क पर चलते-चलते एक वृद्ध को अपने मकान के द्वार पर बैठा देखकर रुककर उससे पूछने लगा—अमुक ग्राम कितनी दूर है ? बुड्ढा चुप रहा। भिखमंगे ने कई बार प्रश्न किया; परन्तु उत्तर न मिला। अन्त में जब उकताकर वह वापस जाने लगा, तब बुड्ढे ने खड़े होकर कहा, 'वह ग्राम यहाँ से एक मील है।' भिखमंगा कहने लगा—'तुम पहले क्यों नहीं बोले, जब मैंने तुमसे कितनी बार पूछा था ?' बुड्ढे ने उत्तर दिया, 'क्योंकि पहले तुमने जाने के लिए लापरवाही दिखायी थी और दुविधा में मालूम होते थे; परन्तु अब तुम उत्साहपूर्वक आगे बढ़ रहे हो इसलिए अब तुम उत्तर पाने के अधिकारी हो गये हो!' (पत्रावली २४४) यानी हम आत्मदीप बनने के अधिकारी तभी होते हैं जब हमारे पाँव अपना दीप स्वयं जलाने के लिए आगे बढ़ जाते हैं।

कुमारी मेकलॉयड ने स्वामीजी के अमेरिका में दिये गये एक व्याख्यान के विषय में लिखा है—"उन्होंने कुछ कहा, जिसका खास शब्द मुझे याद नहीं है, किन्तु तुरत मुझे लगा कि वह सत्य था, और दूसरा वाक्य जो उन्होंने कहा वह सत्य था, और तीसरा वाक्य सत्य था। और मैंने उनके भाषण सात वर्षों तक सुने हैं और उन्होंने जो कुछ कहा वह मेरे लिए सत्य था। उस क्षण से जीवन का अर्थ ही भिन्न हो गया। लगता था, मानों उन्होंने यह अनुभव करा दिया कि मैं अनन्तता में हूँ।' (स्वामी विवेकानन्द इन द वेस्ट न्यु डिस्कवरीज : पृ० २५) हाँ, जीवन का अर्थ बदल जाता है, जब सत्य हमारे भीतर प्रवेश कर जाता है। जीवन का अर्थ बदल जाता है, जब हमें अनन्तता में अपने होने का बोध हो जाता है। जीवन का अर्थ बदल जाता है, जब हम आत्मदीप हो जाते हैं।

उसी भाषण में स्वामीजी ने कहा था—'सदा याद रखो कि संयोग से तुम अमरीकी और स्त्री हो, लेकिन तुम सदैव ईश्वर की सन्तान हो। दिन-रात स्वयं को कहती रहो कि तुम कौन हो। इसे भूलो नहीं।' (वही : पृ० २) श्रीरामकृष्ण कहा करते थे—तुम जैसा सोचोगे वही हो जाओगे।' अतः आत्मदीप होने के लिए यह भी आवश्यक है कि हम अपने को निरन्तर अखंड, अक्षय आनन्द का संगीत महसूस करते रहें, चिरन्तन प्रकाश का निर्झर समझते रहें।

'अप्प दीपो भव'। तुम स्वयं अपना दीपक बनो। यानी स्वयं बुद्ध बनो। स्वयं श्रीरामकृष्ण बनो। स्वयं श्री माँ सारदा बनो। स्वयं स्वामी विवेकानन्द बनो। श्रीरामकृष्ण, श्री माँ और स्वामीजी से मेरी प्रार्थना है कि वे हमें आत्मदीप बनने की प्रेरणा और शक्ति प्रदान करें। जय श्रीरामकृष्ण ! जय स्वामी जी !! □

कामना के रहते हुए चाहे कितनी साधना करो, सिद्धि नहीं मिल सकती। परन्तु एक बात है, ईश्वर की कृपा होने पर, उनकी दया होने पर क्षण भर में सिद्धि मिलती है; जैसे हजार साल का अन्धेरा कमरा—एकाएक अगर कोई दीया ले जाता है तो क्षण भर में प्रकाशित हो जाता है।

—श्रीरामकृष्ण देव

अग्नि-वीणा

—(मुहम्मद सरफराज हुसैन को लिखित)

अलमोड़ा

१० जून, १८९८

प्रिय मित्र,

आपका पत्र पढ़कर मैं मुग्ध हो गया और मुझे यह जानकर अति आनन्द हुआ कि भगवान चुपचाप हमारी मातृभूमि के लिए अभूतपूर्व चीजों की तैयारी कर रहे हैं।

चाहे हम उसे वेदान्त कहें या और किसी नाम से पुकारें परन्तु सत्य तो यह है कि धर्म और विचार में अद्वैत ही अन्तिम शब्द है और केवल उसी के दृष्टिकोण से सब धर्मों और सम्प्रदायों को प्रेम से देखा जा सकता है। हमें विश्वास है कि भविष्य के सभ्य मानवी समाज का यही धर्म है। अन्य जातियों की अपेक्षा हिन्दुओं को यह श्रेय प्राप्त होगा कि उन्होंने इसकी सर्वप्रथम खोज की। इसका कारण यह है कि वे अरबी और हिब्रू दोनों जातियों से अधिक प्राचीन हैं। परन्तु साथ हीं व्यावहारिक अद्वैतवाद का—जो समस्त मनुष्य-जाति को अपनी ही आत्मा का स्वरूप समझता है तथा उसी के अनुकूल आचरण करता है—विकास हिन्दुओं में सार्वभौमिक भाव से होना अभी भी शेष है।

इसके विपरीत हमारा अनुभव यह है कि यदि किसी धर्म के अनुयायी व्यावहारिक जगत् के दैनिक कार्यों के क्षेत्र में इस समानता को योग्य अंश में ला सके हैं तो वे इस्लाम और केवल इस्लाम के अनुयायी हैं—यद्यपि सामान्यतः जिस सिद्धान्त के अनुसार ऐसे आचरण का अवलम्बन है उसके गम्भीर अर्थ से वे अनभिज्ञ हैं जिसे कि हिन्दू साधारणतः स्पष्ट रूप से समझते हैं।

इसलिए हमें दृढ़ विश्वास है कि वेदान्त के सिद्धान्त कितने ही उदार और विलक्षण क्यों न हों, परन्तु व्यावहारिक इस्लाम की सहायता के बिना मनुष्य-जाति के महान् जनसमूह के लिए वे मूल्यहीन हैं। हम मनुष्य-जाति को उस स्थान पर पहुँचाना चाहते हैं जहाँ न वेद है, न बाइबिल है, न कुरान; परन्तु वेद, बाइबिल और कुरान के समन्वय से ही ऐसा हो सकता है। मनुष्य-जाति को यह शिक्षा देनी चाहिए कि सब धर्म उस धर्म के, उस एकमेवा द्वितीय के भिन्न-भिन्न रूप हैं, इसलिए प्रत्येक व्यक्ति इन धर्मों में से अपना मनोनुकूल मार्ग चुन सकता है।

हमारी मातृभूमि के लिए इन दोनों विशाल मतों का सामंजस्य—हिन्दुत्व और इस्लाम-वेदान्ती बुद्धि और इस्लामी शरीर यही एक आशा है।

मैं अपने मानस चक्षु से भावी भारत की उस पूर्णावस्था को देखता हूँ, जिसका इस विप्लव और संघर्ष से तेजस्वी और अजेय रूप में वेदान्तिक बुद्धि और इस्लामी शरीर के साथ उत्थान होगा।

प्रभु से सर्वदा मेरी यही प्रार्थना है कि वह आपको मनुष्य-जाति की सहायता के लिए विशेषतः हमारी अत्यन्त दरिद्र मातृभूमि के लिए, एक शक्ति-सम्पन्न यंत्र बनावें। इति।

भवदीय स्नेहबद्ध

—विवेकानन्द

आशीर्वाणी

—श्रीमत् स्वामी भूतेशानन्द जी महाराज

महाध्यक्ष, रामकृष्ण मठ एवं रामकृष्ण मिशन
बेलुड़ मठ

[रामकृष्ण मिशन की स्थापना के शताब्दी-समारोह के समापन-उत्सव में ३, एवं ४ फरवरी १९९८ को अखिल भारतीय युवा सम्मेलन का आयोजन हुआ था। ३ फरवरी को उसके उद्घाटन सत्र में आशीर्वचन दिया था पूज्य महाराजजी ने। उनके अँग्रेजी भाषण के हिन्दी रूपान्तरकार हैं डॉ० रामानन्द शर्मा, छपरा – सं०]

रामकृष्णमिशन शताब्दी समारोह के समापन पत्र के अवसर पर आयोजित द्विदिवसीय युवा सम्मेलन में बेलुड़ मठ की पावन भूमि पर एकत्र आप सबको देखकर हार्दिक प्रसन्नता हो रही है। आगामी परीक्षा की बस्तता के बावजूद आपने हमारा आमंत्रण स्वीकार किया। हम आपका हार्दिक स्वागत करते हैं।

स्वामी विवेकानन्द को युवा वर्ग से बड़ी आशाएँ थीं। वह कहा करते थे कि कुछ थोड़े से युवक भी संसार में महान क्रांतिकारी परिवर्तन ला सकते हैं। आज का विश्व भी एक क्रान्ति की प्रतीक्षा कर रहा है। मेरा तात्पर्य राजनैतिक क्रान्ति से न होकर सांस्कृतिक और आध्यात्मिक क्रान्ति से है।

स्वामी जी ने समग्र भारत एवं विश्व का अनेक बार भ्रमण किया। अतः वे विश्व एवं भारत की समस्याओं से परिचित थे। आज के भारत को अपना पुराना गौरव प्राप्त करने के लिए मौलिक प्रगति के साथ-साथ अपनी आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक परम्पराओं के पुनर्जागरण की आवश्यकता है। दूसरी तरफ स्वामी जी यह भी जानते थे कि पाश्चात्य देशों को भौतिक समृद्धि के बावजूद अपनी वास्तविक उन्नति के लिए आध्यात्मिक आधार की आवश्यकता है। स्वामी जी का यह निश्चित विचार था कि प्रगति के इन दोनों अवयवों में कोई भी एकांकी रूप से नहीं पनप सकता। इनकी धारणा थी कि विज्ञान और आध्यात्मिकता के समन्वय में ही प्रगति की वास्तविक संभावनाएँ निहित हैं। इसी से सारे दुर्गुणों का निदान संभव है। अतएव स्वामी जी ने पाश्चात्य देशों के अपने विश्वजयी अभियान से भारत लौटने के पश्चात् सवजन हिताय, सर्वजन सुखाय के लिए रामकृष्ण मिशन की स्थापना की जिससे विश्व के विचारों में क्रान्तिकारी परिवर्त्तन संभव हुआ। रामकृष्ण मिशन का उद्देश्य केवल भारतीय जन-मानस का उद्धार ही नहीं विश्व का मंगल विधान भी था। अपनी स्थापना के सौ वर्षों के जीवन में हमने कुछ अच्छे कार्य किए हैं, परन्तु बहुत कुछ करना अभी शेष है।

आज हमारे समाज के नैतिक, सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक धरातल को विनाशकारी प्रवृत्तियाँ घेर रही हैं। सर्वत्र और सभी क्षेत्रों में

ह्रासोन्मुखी प्रवृत्तियाँ दृष्टिगोचर हो रही हैं। जन-मानस निषेधात्मक मूल्यों की ओर आकर्षित हो रहा है और देश की भी युवा चेतना ह्रासोन्मुखी मूल्यों के विस्तार से बुरी तरह ग्रस्त है। मूल्य-हीन विचारों के अनवरत आक्रमण से युवक आत्मविश्वास खो बैठे हैं। यही नहीं उन्होंने अपनी पुरानी गौरवमयी संस्कृति को ठुकराया भी है। मनुष्य जब अपने में अपनी परपराओं एवं संस्कृति में विश्वास एकबार खो देता है तो उसका विनाश निश्चित है। तब हम दूसरों का अंधाधुन्ध अनुकरण करने लगते हैं। आज यही स्थिति है—आज की युवा चेतना दिशाभ्रष्ट हो रही है।

अतएव इस देश को एक वैचारिक क्रान्ति की आवश्यकता है। यही वह क्रान्ति है जिसका दर्शन विवेकानन्द हमारे सामने रखने का प्रयास करते हैं। क्रान्ति का तात्पर्य पारस्परिक संघर्ष नहीं है। शायद तुमने उस बच्चे की कहानी सुनी होगी जिसने भारतवर्ष के फटे हुए मानचित्र को उसके पृष्ठ पर बने मनुष्य के चित्र के साधन पर पुनर्नियोजित कर ठीक कर दिया था। जब मनुष्य का चित्र पुनर्नियोजित हो गया तो मानचित्र भी सही हो गया। इसी प्रकार किसी राष्ट्र के नागरिक यदि महान् होंगे तो वह देश भी महान् होगा। राष्ट्र व्यक्तियों से बनता है। व्यक्ति जितना ही संकल्पशील और सशक्त होगा, राष्ट्र भी उतना ही सबल होगा। अतएव राष्ट्र को सही मार्ग पर लाने के लिए युवकों को अपना चरित्रिक विकास करना होगा।

प्रश्न उठता है कि यह चारित्रिक विकस कैसे होगा। इसके लिए प्रथमतः तुम सबको निषेधात्मक विचारों का परित्याग करना होगा। तुम असहाय और दुर्बल हो इन विचारों को परित्यागना होगा। अतीत की गलतियों को न दुहरा अपनी अन्तर्निहित शक्तियों एवं गुणों में विश्वास करना होगा। सर्वदा वर्त्तमान अवस्थाओं और भावी संभवनाओं के विषय में विचार करना होगा। यह आत्म विकास की पहली सीढ़ी है।

द्वितीयतः तुमको यथासंभव निःस्वार्थ बनना होगा। अपने चारों ओर रहने वालों की सेवा-सहायता करने का प्रयास करना होगा इस विश्वास के साथ कि तुम्हारे देश का भविष्य इनके ऊपर ही निर्भर है। अपने आपको दूसरों की सेवा के लिये समर्पित करना ही सच्ची आत्म सेवा एवं राष्ट्र-सेवा है। स्वामीजी ने भारत के विकास के लिए देश के युवकों को इसी मार्ग पर चलने का संदेश दिया था।

स्वामीजी के आविर्भाव को निरर्थक मत होने दो। स्वामीजी द्वारा निर्देशित मार्ग पर अपने आत्मविकास के लिए कृतसंकल्प होओ। तुम अल्पकाल में ही अपने भाव एवं अपने समाज में भारी परिवर्त्तन एवं कायाकल्प का अनुभव करोगे।

स्वामी विवेकानन्द ने तुम में से प्रत्येक को अपने देश और विश्व की प्रगति के लिए कार्यरत होने का संदेश दिया है। इस संदेश को सुनो और अपने आपको उसके अनुरूप ढालो। तुम्हारे प्रयासों की सफलता के लिए मेरी शुभ-कामना है।

मेरी प्रार्थना है कि श्रीरामकृष्ण, माँ सारदा देवी एवं स्वामी विवेकानन्द के आशीर्वाद तुम्हारे इस पथ के पाक्षेय बनें।

मैं इस समारोह की सफलता की कामना करता हूँ। धन्यवाद।

साधना की प्रतिक्रियाएँ (२)

—स्वामी यतीश्वरानन्द
अनुवादक—स्वामी ब्रह्मेशानन्द
रामकृष्ण मठ, चेन्नई

किसी सन्दर्भ-बिन्दु के बिना संसार में रहना और उसके विषयों के साथ व्यवहार करना अत्यन्त विरक्तिकर अनुभव है। साधक पाता है कि वह न तो चेतना के उच्च केन्द्र में इसका ध्यान कर सकता है, और न ही निम्न केन्द्रों में विचरण करता हुआ पहले की तरह संसार का सुख भोग सकता है। जब अहं चेतना बिना किसी निश्चित बिन्दु के भरकती रहती है, तब साधक अपने बारे में कम विश्वस्त हो पाता है, तथा उसका चरित्र और आचरण कुछ समय के लिये अस्थिर हो जाते हैं। आध्यात्मिक विकास के क्रम में यह एक अपरिहार्य अवस्था है। इस अवस्था से व्यक्ति कितनी जल्दी उबरता है, यही समस्या है। कुछ साधक बहुत लम्बे समय तक उत्कृष्ट और उपहास्य के बीच दोलायमान होते हुये बने रहते हैं। दूसरे कुछ लोग स्थायी रूप से अपनी चेतना को निम्न केन्द्रों में बनाये रखकर पुराने जीवन को लौट जाते हैं।

अपनी चेतना को परमात्म चेतना से जोड़े

अध्यात्मिक-चेतना को हमारी व्यक्तिगत चेतना का विस्तार होना चाहिये। हमें अपनी व्यक्तिगत चेतना के सुदृढ़ आधार पर खड़े होने के बाद आध्यात्मिक चेतना का विकास करना चाहिये। बिन्दु को सर्वप्रथम बहुत निश्चित होना चाहिये और उसके बाद उसे समग्र वृत्त के साथ तादात्म्य स्थापित करना चाहिये। स्पष्ट बिन्दुत्व बोध के बिना वृत्त का अनुभव संभव नहीं है। जब "मैं हूँ" तभी "भगवान" हैं। मैं समस्त समस्याओं रहित आत्मा हूँ इस "मैं" को बलवान बनाना होगा। दूसरे "मैं" को सीमित मैं को जो निरन्तर समस्याएँ पैदा करता है दूर करना होगा। हमें अपनी चेतना को बनाये रखना है लेकिन हमारी चेतना का केन्द्र मिथ्या अहंकार से हटाकर वास्तविक आत्मा में स्थापित करना चाहिये। हमें सदा अपनी उच्चतर चेतना में बद्धमूल रहना चाहिये। कई बार हम अपनी व्यक्तिगत चेतना-बोध में प्रतिष्ठित हुए बिना अनन्त में तैरना चाहते हैं। कोई भी ऐसा अवसर नहीं होना चाहिये जब हम अपनी चेतना में बद्धमूल न हों। हमारी जड़ें कहीं न कहीं गहरी होनी चाहिये। जब हम अपनी जड़ों को मिथ्या आधार से हटायें तो हमें तत्काल अपनी सच्ची आत्मा में बद्धमूल हो जाना चाहिये और स्वयं को आधारहीन स्थिति में नहीं रखना चाहिये।

जब भक्त अपने ध्यान के विषय का चिन्तन करते तथा इष्ट के रूप की स्पष्ट कल्पना करते हैं, तब उन्हें उनके साथ एक सम्बन्ध व्यापित करने में भी समर्थ होना चाहिये, अन्यथा वे कल्पना जगत् में लौटते रहेंगे। साधक को अपनी चेतना को अपने ध्यान के विषय, इष्ट की चेतना के साथ संयुक्त करने में समर्थ होना चाहिये। ऐसा न करने पर गहरी समस्या और

अस्थिरता आ सकती है और साधना का उद्देश्य सफल नहीं होगा। इसकी जीवन सत्ता के संस्पर्श में न आ पाने पर तुम्हें लगेगा कि तुम मानो हवा में तैर रहे हो और तुम आधारहीन हो जाओगे। तुम्हारी अपनी चेतना आधार खो देगी। इसमें कोई सन्देह नहीं कि तुम्हें असत्य आधारभूमि से अतिशीघ्र तथा निश्चयपूर्वक अपनी जड़ें निकाल लेनी चाहिये। अपने इष्ट की निश्चित सत्ता की अनुभूति अत्यन्त महत्वपूर्ण है। तब तुम्हें आन्तरिक शान्ति भी प्राप्त होगी। इष्ट एक कल्पना मात्र नहीं है। इष्ट के रूप की कल्पना के बाद उनके सान्निध्य की अनुभूति सचमुच होती है। यह एक बहुत महत्वपूर्ण बात है। यदि ध्यान का अभ्यास सही ढंग से किया जाय तो तुम्हें असीम शक्ति, शान्ति और स्थिरता प्राप्त होगी, एक गहरी आन्तरिक शान्ति प्राप्त होगी मानो तुम्हारे हृदय में आनन्द का घर स्थापित हो। तब कुछ भी तुम्हें विचलित नहीं कर सकेगा।

साधना के अनेक वर्तमान बुरे परिणाम इष्ट की चेतना को अपनी चेतना से जोड़े बिना, इसके साथ आवश्यक सम्बन्ध स्थापित किये बिना उसके रूप की स्पष्ट कल्पना के कारण होते हैं। आध्यात्मिक जीवन में ऐसा नाजुक समय सदा उपस्थित होता है। ऐसी कठिनाई उन सभी के सामने आती है, जो अपनी साधना को तीव्रता, नियमितता और निष्ठापूर्वक करते हैं। जो सचमुच प्रगति करते हैं, तथा सचमुच उत्साहपूर्वक ध्यान करते हैं, उन सभी के सामने यह समस्या आती है। इस संकट और अस्थिरता से कोई बच नहीं सकता, लेकिन उनको अपने आध्यात्मिक गुरु की सलाह लेनी चाहिये और अपनी साधना के बारे में चर्चा करनी चाहिये। यदि कोई समस्या ही न उठे, जैसा कि कुछ लोगों में होता है, तो कुछ न कुछ गड़बड़ है, संभवतः उनकी साधना कारगर नहीं है।

ज्ञानी में ये संकट बहुत कम प्रचण्ड होते हैं। उसमें अधिक विवेक और सन्तुलन होता है, फिर भी कुछ समस्याएँ तो प्रकट होती ही हैं। लेकिन सदा याद रखो कि ज्ञानी और भक्त और ज्ञानी दोनों में सभी परिस्थितियों में व्यक्तिगत चेतना का विकास होकर अध्यात्म चेतना का उदय होना चाहिये।

स्वप्रयत्न का त्याग न करो

हम सभी में ये शारीरिक और मानसिक प्रतिक्रियाएँ होती हैं और हमारी साधना के साथ हमें इन प्रतिक्रियाओं को सहन करने की शक्ति में भी वृद्धि करनी चाहिये। बहुत से लोग इन प्रतिक्रियाओं के दबाव से टूट जाते हैं। बहुत से लोग कुछ समय के लिये पूरी तरह अस्थिर हो जाते हैं। वे साधन के पूर्व जैसे थे; उससे भी बदतर हो जाते हैं। यदि तुम चेतना के अपने केन्द्र को नीचे से ऊपर की ओर ले जाना चाहते हो, तो तुम्हें अस्थिरता के समय से गुजरना होगा। जब तक लोग सांसारिक जीवन व्यतीत करते रहते हैं, तब तक उन्हें इन विभिन्न अवस्थाओं का भान नहीं होता, लेकिन सही ढंग से की गई साधना सर्वदा विभिन्न अचेतन वृत्ति-प्रवाहों का मन्थन करती है, जिससे अस्थिरता आती है। कई बार ऐसे लोगों में मानसिक बल नहीं बचा होता है; कभी-कभी दीर्घकाल तक विक्षेपयुक्त दोलायमान स्थिति, और यहाँ तक कि नैतिक अस्थिरता बनी रहती है।

इस निराशाजनक स्थिति में कई बार लोग साधना को उत्साहपूर्वक बढ़ाने के बदले उसका त्याग कर देते हैं। साधना त्यागने से वे आध्यात्मिक दृष्टि से नष्ट हो जाते हैं। तब फिर वे एक दुर्भाग्यपूर्ण पतन से बच नहीं पाते,

जिससे वे लम्बे समय तक पुनः उठ नहीं पाते। अतः ऐसी परिस्थितियों में साधन त्यागना बहुत बुरा और बहुत खतरनाक है। उसको और अधिक पकड़े रहो। उसे और तीव्र और प्रभावशाली बनाने का प्रयत्न करो। धीर-स्थिर रूप से, एकाग्रता और लगन के साथ ध्यान और जप किये जाना चाहिये; साथ ही नैतिक आदर्शों का कड़ाई से पालन करना चाहिये। ऐसा न करने वाले सभी लोग आगे या पीछे हटा दिये जायेंगे और कभी भी लक्ष्य के निकट नहीं पहुँच सकेंगे।

जप और नियम का पालन नहीं करने वाला व्यक्ति कुछ भी हासिल नहीं कर सकता। उसमें सभी दिशाओं से उसके ऊपर दबाव डालने वाले बोझ और तनावों को सहन करने के लिये बहुत कम शक्ति रहेगी। इसीलिये किसी भी साधक के लिये शारीरिक अथवा मानसिक मार्गों से शक्ति व्यर्थ क्षय की कोई गुँजाईश नहीं है। पुरातन आचार्य भली-भाँति जानते थे कि उनके यम और नियमों के पालन, नैतिकता के विषय में इतने कट्टर होने का क्या करण है। यदि इन नियमों का पालन नहीं किया गया तो उसका परिणाम मानसिक विकार, हमारी सभी क्षमताओं में पर्याप्त कमी तथा इन्द्रियों की अधिकतर दासता के अतिरिक्त और कुछ नहीं होगा। इन्हें केवल सिद्धान्त मात्र मत समझो। हम भी साधना की इन प्रारंभिक अवस्थाओं से गुजरे हैं तथा हमने अपने महान आचार्यों को देखा है तथा उनसे बहुत सी बातें सुनीं हैं। यह किन्हीं पुरातन रुढ़िवादी ग्रन्थों में पाया जाने वाला पुस्तकी ज्ञान मात्र नहीं है।

साधना का प्रारंभिक काल, जब व्यक्ति को इन भयानक प्रतिक्रियाओं का सामना करना पड़ता है, एक महान परीक्षा का समय होता है। साधक में धैर्य और अटूट अध्यवसाय होना चाहिये, उसके बाद अच्छे दिन आयेंगे। महान मानसिक शक्ति को नियंत्रण में रखना चाहिये अन्यथा हमारे पास आगे बढ़ने की शक्ति नहीं रहेगी। एक सबल शरीर और मस्तिष्क होते हुए भी एक समय ऐसा आता है, जब हम अत्यधिक अस्थिर और भयग्रस्त हो जाते हैं। प्रारंभ में उच्छृंखल कल्पनाओं और प्रेरणाओं के साथ संघर्ष का काल आता है; उसके मानसिक यंत्रवतता और बौद्धिक आदतों से संघर्ष का काल, लेकिन उसके बाद स्थिरता, शान्ति और आन्तरिक समता का काल उपस्थित होता है।

यदि साधक गुरु के निर्देशों का सावधानी से पालन करे, और साधुओं के संग में रहे तो इनमें से कुछ प्रतिक्रियाओं को अवश्य दूर रखा जा सकता है। लेकिन यदि तुम्हें किसी भी प्रतिक्रिया का अनुभव न हो, और यदि तुम पाओ कि तुम्हारा आध्यात्मिक जीवन प्रारंभ से ही बाधा रहित और सरल है, तो बहुत संभव तुम्हारी साधना में कुछ त्रुटि है। बहुत संभव है कि तुम्हारी साधना तीव्र अथवा गहरी नहीं है। वह यंत्रवत् चल रही होगी।

लेकिन इसका यह अर्थ नहीं है कि संघर्ष और उलझनें आध्यात्मिक लगन और तीव्रता के असंदिग्ध लक्षण हैं। गैर-आध्यात्मिक शक्तियाँ प्रायः आध्यात्मिक प्रयास के साथ जुड़ जाती हैं। लेकिन छिलका दाने से शीघ्र पृथक हो जाता है। सच्ची आन्तरिक आध्यात्मिक लगन वाले लोग विजयी और सफल होने तक संघर्ष करते रहते हैं जिन लोगों ने अपनी आध्यात्मिक पिपासा को कृत्रिम रूप से उत्तेजित किया है, वे संघर्ष के प्रारंभिक दिखावे के बाद रुक जाते हैं, अथवा मानसिक रोग-ग्रस्त भी हो जाते हैं। (क्रमशः)

चिन्तन

दोष-दर्शन

—स्वामी आत्मानन्द

मैंने दिल्ली में एक बार श्रीरामकृष्णदेव की लीला-सहधर्मिणी श्री माँ सारदा देवी के जीवन और सन्देश पर चर्चा की थी। मां ने किसी को शान्ति पाने का उपाय बताते हुए कहा था—"किसी के दोष मत देखना, दोष देखना अपना।" बाद में एक श्रोता ने मुझसे पूछा, "यदि हम किसी के दोष न देखें, तो काम कैसे चलेगा? व्यक्ति गलती करेगा और हम उसका दोष बताएँगे, तब तो दोष देखना हो गया। और नहीं बताएँगे तो इससे दुनिया कैसे चलेगी?"

यह सार्थक प्रश्न है। यदि हम दोष न देखें, तो सुधार कैसे होगा? यदि माता-पिता अपने बच्चे के दोष न देखें, तब बच्चे कैसे सुधरेंगे? यदि मैं अपने मातहत काम करने वाले लोगों का दोष न देखूँ तो उनको सुधारूँगा कैसे? यदि शिक्षक विद्यार्थी का दोष न देखें, तो विद्यार्थी आगे बढ़ेगा कैसे? बिना दोष-दर्शन के दोषों को सुधारने का कोई उपाय नहीं। तब यह जो कहा जाता है कि दूसरों का दोष न देखो, इसका क्या मतलब?

बात यह है कि दोष देखना भी दो प्रकार का है। एक प्रकार वह है, जिसमें दोष देखकर हम व्यक्ति की निन्दा करते हैं, उस पर हँसते हैं। ऐसा दोष देखने में हमें रस मिलता है। हम चटखारे लेकर दूसरे के दोषों की चर्चा करते हैं। दूसरा प्रकार वह है, जिसे हम चिकित्सक की दृष्टि कहते हैं। चिकित्सक भी रोगी के दोष देखता है, पर हँसने के लिए नहीं। वह दोषों को दूर करना चाहता है। दोषों को देखकर उसे हँसी नहीं आती, न ही दोषों का प्रचार करने में उसे रस मिलता है। वह भी बहुत बारीकी से दोष देखता है, पर उनका निदान करने के लिए। जिस दोष-दर्शन की निन्दा की जाती है, वह पहले प्रकार का है।

तो, उचित और अनुचित दोष-दर्शन की मोटी कसौटी यह है कि जब हम व्यक्ति का हित करने के लिए उसके दोषों को देखते हैं, तो वह उचित है। इसके पीछे हमारा अभिप्राय यही रहता है कि दोषों को बता देने से व्यक्ति अपने को सुधारने की चेष्टा करेगा। पर जहाँ दोष-दर्शन के पीछे व्यक्ति के अहित का भाव हो, वह अनुचित है। ऐसे दोष-दर्शन से हमें बचना चाहिए। और इसलिए ही नहीं कि उससे हम व्यक्ति का अकल्याण करते हैं, बल्कि इसलिए भी कि ऐसा करके हम स्वयं अपना अकल्याण करते हैं। जब हम दूसरों के दोषों को इस उद्देश्य से देखते हैं कि उन लोगों को हम नीचा दिखाएँ, तो वस्तुतः हम दोष का रसास्वादन कर रहे होते हैं। ऐसा रसास्वादन हमारे अपने भीतर उन दोषों को संक्रमित करने लगता है। फलस्वरूप जिन दोषों का दोषी हम दूसरों को बनाते थे, वे ही दोष हममें पैदा हो जाते हैं।

इस सन्दर्भ में श्रीरामकृष्णदेव के जीवन में घटी एक घटना स्मरणीय है। उनसे मिलने के लिए कर्ताभजा सम्प्रदाय के लोग आये थे। यह एक वामाचारी सम्प्राय था जो पंच-मकार की साधना में विश्वास करता था। जब वे लोग चले गये, तो नरेन्द्र नाथ, जो कालान्तर में स्वामी विवेकानन्द के नाम से विख्यात हुए, उन लोगों की उनकी साधना पद्धति की जमकर निन्दा करने लगे। श्रीरामकृष्ण ने उन्हें एकदम रोक दिया, कहा—"क्या व्यर्थ की चर्चा करता है? दूसरों की गन्दगी की चर्चा हमारे मन में भी गन्दगी भर देती है। इसलिए ऐसे दोष-दर्शन और निन्दा-आक्षेप से बचना चाहिए।"

यह दोषों के प्रति सही दृष्टि है। हमें सावधानी रखनी चाहिए कि दूसरे व्यक्ति के जिन दोषों की चर्चा में हमें रस आता है, कहीं वे हमारे भी भीतर तो नहीं पैठ गये हैं।

दोष-दर्शन का एक दूसरा भी सन्दर्भ है, जो हमारे अपने लिए उपकारी है। चिकित्सक, शिक्षक, माता-पिता अथवा बड़े बुजुर्गों का दोष-दर्शन दूसरों के लिए उपकारी होता है, पर वे स्वयं के उपकार के लिए भी दोष-दर्शन कर सकते हैं। इसका वर्णन गीता के १३वें अध्याय के अन्तर्गत ८वें श्लोक में किया गया है, जहां पर कहा गया है—**'जन्ममृत्यु जरा व्याधि दुःख—दोषानुदर्शनम्'**—जन्म, मृत्यु, बुढ़ापा और रोग में दुःख और दोष का बार-बार विचार करना। यह साधना के क्षेत्र का दोष-दर्शन है; जो शरीर के दोषों को देखने का पाठ सिखाता है। जिस शरीर के प्रति आसक्ति के कारण हम दूसरों के हित का ध्यान नहीं रखते, वह स्वयं कितने दोषों से भरा है, ऐसा बारम्बार विचार हमें अपने शरीर के घेरे से ऊपर उठाता है और व्यापक दृष्टि प्रदान करता है। जिस शरीर को हम इतना सजाते-सँवारते हैं, वह आखिर मल का ही तो हण्डा है, केवल गन्दगी ही तो बिखेरता है, यदि ऐसा दोष-दर्शन रहा तो उससे हमें स्वार्थ से ऊपर उठकर जीवन के उच्चतर मूल्यों की ओर उन्मुख होने में सहायता मिती है। हम दोष-दर्शन तो करें, पर सही सन्दर्भों में करें।

—'विवेक ज्योति' ३३/४ से साभार।

न जातु कामः कामानामुपभोगेन शाम्यति।
हविषा कृष्णवर्त्मेव भूय एवाभिवर्धते॥

(भागवत ९/१९/१४)

—मनुष्य की कामना काम्यवस्तु के भोग से शान्त नहीं होती। जैसे घी डालने से अग्नि शान्त न होकर और अधिक प्रज्वलित हो उठती है, वैसे ही कामना-परायण मन को भोग अर्पित करने से वह कामना सौ-गुनी भड़क उठती है। भोग मन को शान्त नहीं कर सकता।

भाषण

देशभक्त बनो !

—डॉ० किरण बेदी, आई० पी० एस०
नई दिल्ली

[श्रीरामकृष्ण आश्रम, राजकोट में ११-[illegible]-९८ के दिन मैग्सेसे एवार्ड प्राप्त भारत की प्रथम महिला आई० पी० एस० (I. P. S.) ऑफिसर ने जो अत्यन्त प्रेरक भाषण दिया था, उसे पाठकों को उपहार स्वरूप दे रहे हैं। टेपबद्ध भाषण के अनुलेखन का श्रमसाध्य कार्य ब्रह्मचारी अनुराग ने किया है—सं०]

प्रणाम स्वामीजी, उपस्थित भाइयो-बहनों एवं मेरे बच्चो ! बच्चो, मेरी एक बच्ची (लड़की) है, मैं एक युवा माँ हूँ। इसीलिये मैं आपको कह सकती हूँ मेरे बच्चो। आज मैं अपने आप को सौभाग्यशालिनी मानती हूँ कि मुझे स्वामीजी की जन्मतिथि पर बोलने के लिए आमंत्रित किया गया।

मैं हमेशा से ही एक अच्छी विद्यार्थी रही और मुझे मेरे शिक्षक-गण हमेशा पसन्द करते थे। क्योंकि मैं एक अनुशासित (Disciplined) विद्यार्थी (Student) थी। मैं अपना Home work (गृह कार्य) ठीक से करती थी। कभी भी Home work (गृह कार्य) न करने के लिये बीमारी का बहाना नहीं लगाती थी। स्वामी जितात्मानन्द में मुझे एक अच्छा गुरु मिला एवं मैं उनकी एक अच्छी शिष्या बनी।

हम सभी को हमारे देश भारत की जरूरत है, और हमारे देश भारत को हमारी। हम सभी को Without an exception (बिना किसी अपवाद) के। जो जिस जगह है, उसी जगह से; यह कहने से तो काम नहीं चलेगा कि अभी तो मैं छोटा हूँ ! मैं क्या कर सकता हूँ ? जब बड़ा हो जाऊँगा तब करूँगा। अभी तो जो बड़े हैं वे करेंगे। बच्चो, हमारा भारत देश इतना इन्तजार नहीं कर सकता है। भारत को हमारी जरूरत आज और इसी क्षण है (This very moment)। भारत इतना इन्तजार नहीं कर सकता है (India cannot wait)। India cannot wait that Long. (भारत इतना लम्बा इंतजार नहीं कर सकता है।) और हमको तो जरूरत है ही अपनी मातृभूमि की, माँ की किसको जरूरत नहीं होती है।

जब मैं छोटी विद्यार्थी थी तो मैं जानती थी कि मुझे अपने देश की सेवा करनी है अपना एक कर्म निभाना है। मुझे अपने देश का गौरव बढ़ाना है, अपने देश का झंडा ऊँचा करना है। मुझे अपने राष्ट्रगान के प्रति सम्मान था। यदि बिस्तर में होती तो खड़ी हो जाती थी, क्या अब हम ऐसा करते हैं ? शायद नहीं। सभी तो नहीं करते। परन्तु उस समय हम सभी करते थे। जोर से कहते थे भारत माता की जय, वन्दे-मातरम्। इतना सम्मान करते थे हम अपने देश का। क्योंकि हमारे अन्दर एक लहर थी, कि हमने आजादी की लड़ाई तो नहीं लड़ी, न ही देखी। परन्तु आजादी की कीमत जो लोगों ने चुकायी थी, वह याद थी।

मेरे बच्चो, भाइयों और बहनों हमारा रोल (भूमिका) क्या है? तो मेरा कहना है, कि, जस जगह पर भी हम हैं, वहीं से शुरू करें। (विद्यार्थियों की भूमिका) (Role of students in Nation building.

यदि हम स्वामीजी की बात लें तो स्वामीजी was a brillient student, एक उत्कृष्ट विद्यार्थी थे। स्वामीजी ने कहा विद्यार्थियों को अपने मन को concentrate (एकाग्र) कर के अध्ययन में लगाना चाहिए।

एक विद्यार्थी की तरह, स्वामीजी एक Concentrated mind (एकाग्र मन वाले विद्यार्थी) थे। वे एक (questioning student) प्रश्न करने वाले विद्यार्थी थे। वे एक सतत जानने की इच्छा रखने वाले विद्यार्थी थे। He was a student with brillient memory) (वे एक विलक्षण मेधा शक्ति वाले विद्यार्थी थे।), जो हमेशा सीखना चाहता था। यह एक शिक्षा है जो विद्यार्थियों को स्वामीजी से लेनी चाहिए। बच्चों, आप लोग बहुत सौभाग्यवान हैं कि आप लोगों के लिए ऐसी सभाएँ आयोजित की जाती हैं। हमारे जीवन मार्गदर्शन (Guidence) के लिए हमसे किसी ने कुछ नहीं कहा। हमें कोई बताता नहीं है कि हमें क्या करना है। आप लोग निश्चय ही सौभाग्यशाली हैं कि आप लोगों के मार्गदर्शन और शिक्षा के लिये यह सब आयोजन है। तब क्यों नहीं मेरे बच्चे छोटे-छोटे विवेकानन्द बनेंगे? जरूर बनेंगे! भारत को जरूरत है हम सभी के विवेकानन्द बनने की।

ये विवेकानन्द जो किस चीज का प्रतिपादन करते हैं। स्वामीजी प्रतिमान हैं, सुदृढ़ स्वास्थ्य, सुदृढ़ मन और सतत सेवा के। जब स्वामीजी छोटे थे, और कोई फकीर उनके घर आ जाता था, तो वे अपने कपड़े तक उसे दे देते थे। उन्हें ऐसा करने से रोकने के लिये घर की ऊपरी मंजिल में बन्द कर दिया जाता था। तो आप जानते हैं; वे क्या करते थे। वे ऊपर की खिड़की से ही कपड़े एवं फकीर की आवश्यकताओं की वस्तुएँ फेंक दिया करते थे। पढ़ा है यह आप लोगों ने। यदि आप लोग भी ऐसे ही अपनी चीज दूसरों को देने के लिये तत्पर रहेंगे तो आप लोग भी छोटे-छोटे विवेकानन्द बनेंगे।

जब मैं तिहार जेल की प्रभारी थी, तब मैंने यही किया। हमें दस हजार कैदियों को पढ़ाना होता था, शिक्षित करना होता था। तब हम स्कूल से students (विद्यार्थियों) को स्कूलों से इन्हें (कैदियों को) शिक्षा देने के लिए बुलाते थे। वे अपनी पॉकेट मनी से उनके लिय कापी-पेन्सिल खरीद कर लाते थे, और कहते थे कि भले ही आप हमसे उम्र में बड़े हैं, परन्तु पढ़ो शिक्षित हो जाओ, लायक बनो। इस वक्त हमा बच्चों का कर्त्तव्य क्या है? कर्त्तव्य है पढ़ना, विद्यार्जन करना, मेहनत से पढ़ो और अच्छे विद्यार्थी बनो। ज्ञान और सही चरित्र स्वामीजी की याद है।

यदि युवाओं (youth) की बात करें तो स्वामीजी का सर्वाधिक सन्देश युवाओं के लिए ही है। मजबूत बनो "Healthy mind in healthy body" (स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मन) खूब खेलो (Play lots of game) बाहर निकलो और खूब out door (बाह्य प्रांगणीय) खेल खेलो। उसके बाद अध्ययन करो। खूब पढ़ो, ठीक और सही चीजें पढ़ो। सही चीजें देखो दूरदर्शन के कुछ कार्यक्रम तो अत्यधिक, ज्ञानवर्धक होते हैं, शिक्षाप्रद होते हैं।

अब बड़ों के लिये। बड़ों का क्या योगदान है राष्ट्र निर्माण में?

यदि वह शिक्षक है तो उसके पास तो देने-ही देने को है. राष्ट्र निर्माण में, शिक्षादान कार्य तो एक Great missionary work (महान सेवा कार्य) है। Not just work but a great missionary work (केवल एक कार्य मात्र नहीं वरन् एम महान सेवा-कल्याण कार्य) और यदि शिक्षक अपने आप को, Missionary शिक्षा प्रचारक दूत समझने लगेंगे तो किनने बच्चे रोज विवेकानन्द बनने लगेंगे।

जब मैं लेकचरार (प्राध्यापिका) थी। मैं पुलिस सेवा में आने से पूर्व. खालसा महिला कॉलेज में पोलिटिकल साईन्स को प्राध्यापिका थी। जब कभी कोई जीवनी या पाठ होता तो मैं पीछे डेस्क पर बैठ जाती थी, और बच्चे उसे वर्कशाप बनाकर (Disscuss) चर्चा करते थे कि उन्हें उस जीवनी में क्या अच्छा लगा। वे चर्चा करते थे और मैं विद्यार्थी बन जाती थी।

टीचर का काम रट्टा लगवाना नहीं है, उसका काम है विषय के गुण देना; students विद्यार्थियों को यह बताना कि इस शिक्षा को वे अपने जीवन में कैसे उपयोग करेंगे।

शिक्षकों को वेतन तो मिलता ही है और मिलेगा भी! युनियन है, ठीक है। परन्तु पहले है कर्त्तव्य। कर्त्तव्य क्या है? शिक्षक (Teacher) का कर्त्तव्य यह देखना है कि जो student उसके सामने है, क्या उसका चरित्र निर्माण हो रहा है। क्या वह राष्ट्र निर्माण में योगदान कर रहा है। क्या वह जानता है कि अच्छा और बुरा क्या है। क्या वह जानता है कि उसके देश को आजादी कितनी मुश्किलों और कितनी कीमत अदा करने के बाद मिली। इस आजादी की आवाज कब उठी और इस आजादी को हासिल करने के लिये कितने लोगों ने अपनी जान दे दी। क्या वे जानते हैं कि कितने माँ-बापों ने अपने बच्चे कुर्बान किये? क्या वे जानते हैं कि कितने लोग आजादी के लिये अपना सारा जीवन जेल में गुजार गये और कितने हंसते-हंसते फांसी के फन्दे पर झूल गये? क्या वे जानते हैं कि इतनी और सहज और आसान दिखने वाली आजादी कितने बलिदानों के परिणाम-स्वरूप प्राप्त हुई है।

शिक्षक का कर्त्तव्य है यह सब शिक्षा देना, तमाम मुश्किलों के बाद भी उन्हें अलग रखते हुए अपना कार्य करते जाना। इस पीढ़ी को जाने भी दें; तो आगे आने वाली पीढ़ी, चरित्रवान होगी निष्ठावान होगी, और अपने देश के प्रति समर्पित होगी।

अब बात रही अभिभावकों की—अगर हम आज स्वामी विवेकानन्द की बात कर रहे तो हमें याद रखना चाहिए की स्वामीजी में पहले गुण डालने वाली उन्हें शिक्षा देने वाली उनकी माता एवं उनकी दादी थीं। जिन्होंने कि उन्हें (स्वामीजी) गोद में बिठाकर Scriptures (धर्म ग्रंथों) को उन्हें सुनाया। उन्हें जो कुछ सुनाया जाता उन्हें याद हो जाता था; प्रखर स्मरण शक्ति एवं प्रचण्ड मेधा उन्हें ईश्वर प्रदत्त थी। परन्तु महत्वपूर्ण यह है कि उन्हें कोई अच्छी बाते तो सुनाता था। माँ-बाप का यह रोल (भूमिका) है कि; जिसे जब समय मिले बच्चे को पास बिठा अच्छी-अच्छी बातें सुनावें। वे बड़े होकर नहीं सुनेंगे, कहेंगे, क्या बकवास करते हो. छोटे रहते ही पकड़ो फिर हाथ नहीं आयगे। आरिस्टाटल के पास एक औरत गई और पूछा महाशय बताइये बच्चे को पढ़ाना शुरू करने के लिये कौन सी उम्र उपयुक्त है। अरिस्टाटल ने पूछा मां तुम्हारे बच्चे की उम्र कितनी है। इस पर उस महिला ने जवाब दिया, महानुभाव, मेरा

बच्चा केवल पाँच वर्ष का है तब अरिस्टाटल बोले माँ तुमने अपने बच्चे की शिक्षा में केवल पाँच वर्ष का देर कर दी है। शिक्षा की शुरुआत होती है प्रथम दिन से। यदि यह माँ का कर्त्तव्य है, तो बाप का भी यह कर्त्तव्य है। एक कान से यदि माँ अच्छी बातें सुनाये तो दूसरे से बाप को सुनाना चाहिए। ऐसा तो नहीं है कि बच्चे की शिक्षा माँ का काम है। यदि मेरी जैसी माँ होगी कि जो २४ घण्टे ही बाहर रहती है, तो कैसे काम चलेगा ? तब यह जिम्मेदारी पिता की हो जाती है। रामकृष्ण मिशन से यह शिक्षा जाती है कि दोनों ही बराबर हैं, ठीक है न स्वामीजी (स्वामी जितात्मानन्द जी)। श्रोताओं में हंसी का ठहाका) तो यह है माता-पिता का रोल (भूमिका)।

अब बात आती है व्यापारी वर्ग की—देखिये इस देश की इतनी बड़ी जनसंख्या है और केवल एक करोड़ बीस लाख (12 million) लोग टैक्स भरते हैं। कितनी शर्म की बात है; कितने लोग है और कितना पैसा कमाते हैं, और टैक्स भरने वाले ऊँगलियों पर गिने जाते हैं। वे राष्ट्रभक्त नहीं, राष्ट्र विरोधी हैं। यदि मुझे समय मिला या ऐसा मौका आया, जैसी कि स्वामीजी ने (जितात्मानन्द जी) Prophesy (भविष्यवाणी) की तो पहले उन्हें तिहार में भेजूंगी, जिन्होंने कि पैसा कमा कर भी टैक्स नहीं दिया। भगवान ने आपको इतना दिया है; और कितना चाहिए आपको, अभी छिपा लोगे बाद में गोलियाँ खाओगे, कभी हार्ट अटेक के लिये कभी डायबिटीज के लिये। फायदा क्या। कमाओ, रखो उतना जितना जरूरी हैं, जितना आपका हक है, बाकी दो देश को। ताकि राष्ट्र निर्माण हो। ऐसा वंश तैयार करो कि जो दोगे उस पर निगरानी रखोगे कि, कहीं बेइमान राजनीतिज्ञ (Politician) उसे खा न जायें, ये दोनों ही चीजें साथ-साथ चलेंगी। लेकिन राजनीतिज्ञ (Politicians) कहते हैं कि देते ही नहीं तो क्या करेंगे दो और हक मांगों कि हम निगरानी करेंगे, उसी राजनीतिज्ञ को देश की बागडोर सम्हालने देंगे जो नेक होगा/होगी। यह रोल हमारे व्यापारी वर्ग (Bussince class) का है।

मैंने जैसा शुरू में ही कहा कि हमें यदि राष्ट्र निर्माण करना है; तो हम सबको अपना-अपना रोल अदा करना होगा। हमें यह सोचना होगा कि बाकी सब अपना रोल अदा कर चुके हैं, अब केवल मुझे अपना रोल अदा करना बाकी है, तभी राष्ट्र निर्माण होगा। यदि कोई सोचे कि मेरा तो कुछ नहीं है, पहले तुम कर लो, तो इस पहले तुम-पहले तुम में गाड़ी (समय) तो निकलती जा रही है। और इसी तरह ५० साल की गाड़ी (समय) तो निकल गयी। गाड़ी किस चीज की चली (निकल) गयी। गाड़ी निकल गयी राष्ट्रनिर्माण की, चरित्र निर्माण की। जब भी कहीं सभा संगोष्ठी होती है, तो यही बात होती है कि हमारा राष्ट्रीय चरित्र चला गया, हमारा राष्ट्र प्रेम चला गया। अब गाड़ी चली गई जिसमें हम सभी बैठे थे। अब हम चाहें कि वापस आ जायें तो नहीं आने के। अब हमें नयी गाड़ी में नये लोगों को बिठाना होगा। और नयी गाड़ी का माहौल कौन तैयार करेगा, माहौल तैयार करना होगा हमें। विद्यार्थी अपने जीवन में समय की कद्र करें, अध्ययन करें ज्ञानार्जन करें और स्वस्थ शरीर और मन रखें। बड़ों का काम है कि वे कमायें और बाँटें, और अधिकार माँगे कि मैं देखता हूँ आप लोग कैसे उपयोग करते हैं मेरी खून पसीने की कमाई का। तो कमायें और बांटे।

दिल्ली में एक ओर बड़े-बड़े महल हैं तो दूसरी ओर झुग्गी-झोपड़ियाँ। आजकल जहाँ

मैं काम करती हूँ वहाँ आकर लोग कहते हैं, इन झुग्गी-झोपड़ियों को हटाइये। बड़ी बदबू आती है; तो मैं कहती हूँ तुम्हें हटा दूँ तुम लोगों से इन्हें बड़ी बदबू आती है। तो वे आश्चर्य के साथ मुझसे पूछते हैं, इन्हें किस चीज की बदबू आती है। तो मैं कहती हूँ कि तुम्हें इनके टायलेट (पाखाने) की बदबू आती है, तो इन्हें तुम्हारी शराब की और काले धन की बदबू आती है। वे (अमीर) पैसा बेहिसाब खर्च करते हैं या तहखानों में छुपाकर रखते हैं, न कि यह सोचते हैं कि उसे कम्युनिटी डेवलपमेंट में लगायें। एक पैसा इकट्ठा करता जा रहा है तो दूसरा (गरीब) बच्चे इकट्ठा (पैदा) किये जा रहा है। और कोई मनोरंजन जो नहीं है।

यह हमारे समाज की दशा है। कौन किसकी जिम्मेदारी लेगा, राष्ट्रनिर्माण कैसे होगा। मेरा यही कहना है कि राष्ट्र निर्माण में हम सबकी जरूरत है, हरेक को समय की जरूरत है।

समय (Time) सभी के पास एक जैसा है। सभी के पास दिन के २४ घण्टे हैं। मेरे पास भी, आपके पास भी। जब मैं तिहार में थी तो मैंने अपने कैदियों से पूछा ऐसा क्या है, जो आपके पास और मेरे पास बराबर है? पहले वे चुप रहे फिर थोड़ी देर सोच-विचार कर उनमें से कुछ बोले, समय (Time)। मैंने कहा बिल्कुल ठीक। अब २४ घंटे हैं आपके पास भी और मेरे पास भी फिर अन्तर क्या है। अन्तर यह है कि मैं अपने २४ घंटे, पूजा में, नेकी में और अपने कर्म को करने में लगाती हूँ और तुम अपराध करने में, लोगों को नुकसान पहुँचाने में। फिर भी देखो! भगवान कितने दयालु हैं, कि अगल दिन फिर २४ घण्टे देते हैं। रोज देते हैं, बार-बार देते हैं। अब जो कुछ हुआ सो ठीक, अब तो जीवन निर्माण करो। अब तो अपना चरित्र निर्माण करो। अब तो राष्ट्रनिर्माण में लगो। जीवन निर्माण, चारित्र-निर्माण से ही राष्ट्रनिर्माण होता है। चरित्र निर्माण ही सामूहिक रूप में राष्ट्र निर्माण है। मैं समझती है कि यह स्वामीजी (विवेकानन्द) के जीवन की यह जबरदस्त Practical teaching (व्यवहारिक शिक्षा) है। जब उन्हें देश का दूत बनना पड़ा, तो देश को समझने के लिये वे निकल पड़े थे पैदल साधु वेश में, केवल सिद्धान्तवादी नहीं बने वे।

मेरे बच्चो, मैं समझती हूँ कि जो समय का सही उपयोग करता है, वही चरित्र निर्माण करता है। वही राष्ट्रीय निर्माण में सहयोग देता है। हमारी राष्ट्रीय पूँजी हैं—जितना समय देश (Man hour) देश के पास है। हम सभी के पास २४ घंटे हैं वही कुल मिलाकर देश की सम्पत्ति बन जाता है। देखिये एक दिन strike (हड़ताल) होती है तो देश का Production (उत्पादन) comes to halt ठप्प हो जाता है। कितने manhours मानवी घण्टों) का नुकसान होता है। एक दिन ट्रांसपोर्टरों की हड़ताल होती है और सारा देश रुक जाता है। आवागमन बन्द, उत्पादन ठप्प और देश के २४+१०० करोड़ बर्बाद (नष्ट)।

चाहे हम विद्यार्थी हों, शिक्षक हों, माता-पिता हों या Business man हों हम सभी को अपने समय के प्रति जागरूक होना पड़ेगा, यह समझना होगा कि समय जा रहा है। ऐसा होने से अवश्य ही चरित्र निर्माण होगा, राष्ट्र निर्माण होगा। आज के दिन से हमें यही प्रेरणा लेनी होगी, कि यदि हम सभी अपने समय का सही उपयोग करेंगे तो एक दिन जरूर हम सभी विवेकानन्द बन सकेंगे, और विवेकानन्द न बन सके तो नरेन्द्र अवश्य ही बन सकते हैं, वह नरेन्द्र

जिसका एक चरित्र था, वह नरेन्द्र जो अपने देश से प्रेम करता था, और धीरे-धीरे त्याग की ओर जाकर स्वामी बन गया पता नहीं हम उस त्याग तक पहुँच सकेंगे कि नहीं, स्वामी बन सकेंगे या नहीं, पर इतना अवश्य है कि हम नरेन्द्र तो अवश्य ही बन सकते हैं। आज के दिन स्वामी जी की सही मायने में पूजा यह होगी कि हम प्रण लें कि हम समय का सही उपयोग करते हुए राष्ट्र निर्माण में लगेंगे, एक विवेकानन्द या एक नरेन्द्र बनने का प्रयास करेंगे।

आओ प्रार्थना करें कि हम सभी अपने प्रण में सफल हो सकें।

धन्यवाद ! जय हिन्द !

विवेक शिखा की 'संरक्षक'-योजना

विवेक शिखा के प्रकाशन की सुविधा को ध्यान में रखकर 'विवेक शिखा' के 'स्थायी कोष' की एक योजना बनायी गयी है। जो कोई कम से कम १०००/- (एक हजार) रुपये या इससे अधिक रुपये विवेक शिखा के 'स्थायी कोष' के लिए दान देंगे वे इसके संरक्षक होंगे। 'विवेक शिखा' में उनका नाम प्रकाशित होगा और वे यावज्जीवन विवेक शिखा निःशुल्क प्राप्त करते रहेंगे। विवेक शिखा के जो आजीवन सदस्य हैं वे शेष रकम देकर इस पत्रिका के संरक्षक हो सकते हैं। यह योजना केवल भारत के दाताओं के लिए लागू है।

—व्यवस्थापक

संरक्षक-सूची

संरक्षक का नाम	स्थान	रुपये
१. श्रीमती कमला घोष	इलाहाबाद	३,९९०/-

शताब्दी का अन्तिम महाकुम्भ मेला

[गत अप्रैल १९९८ में इस शताब्दी का आखिरी कुम्भ मेला हरिद्वार में विराट् रूप में आयोजित हुआ था। इस अवसर पर रामकृष्ण मठ और मिशन के कनखल केन्द्र ने भी कई कार्यक्रम आयोजित किये थे जिनमें रामकृष्ण मठ एवं मिशन के परम उपाध्यक्ष श्रीमत् स्वामी रंगनाथानन्द जी महाराज एवं श्रीमत् स्वामी गहनानन्द जी महाराज के अतिरिक्त रामकृष्ण मठ के प्रायः दो सौ साधुओं ने भाग लिया था। इस आयोजन की एक रपट पूज्य स्वामी गहनानन्द जी महाराज के निर्देशानुसार रामकृष्ण आश्रम राजकोट के स्वामी निखिलेश्वरानन्द जी ने प्रस्तुत की है। रपट का अंग्रेजी से हिन्दी अनुवाद डॉ० केदार नाथ लाभ ने किया है। —सं०]

स्वामी विवेकानन्द ने कहा था कि धर्म और केवल धर्म ही भारत की आधारशिला, मेरुदण्ड और जीवन केन्द्र है। इस कथन पर कोई तब तक प्रत्यय नहीं कर सकता जब तक वह कुम्भ मेला को नहीं देख लेता जिसमें देश के हर भाग से, हर उम्र के, विभिन्न मतों के और विभिन्न सम्प्रदायों के लाखों लोग बिना किसी आमंत्रण पत्र के एकत्र होते हैं। इस शताब्दी का अन्तिम कुम्भ मेला जो हाल में हरिद्वार में लगा था इस तथ्य को प्रमाणित करता है। कहा जाता है कि देश के सभी हिस्सों से, यहाँ तक कि विदेशों से भी लगभग एक करोड़ लोग लम्बी दूरी तय कर और भीषण कठिनाइयों को झेलकर भी केवल पुण्य सलिला गंगा में एक डुबकी लगाने और अपने को पवित्र करने के लिए हरिद्वार आये थे। यह एक विराट आयोजन था। उत्तर प्रदेश की सरकार ने विशेष व्यवस्था करने के लिए इस अवसर पर निन्यानवे करोड़ रुपये स्वीकृत किये थे।

रामकृष्ण मठ और रामकृष्ण मिशन के कनखल केन्द्र ने भी प्रायः दो सौ संन्यासियों और लगभग एक हजार भक्तों की मेजबानी की थी और इस अवसर पर कई विशेष कार्यक्रमों का आयोजन किया था। १० से १३ अप्रैल १९९८ तक प्रत्येक दिन अपराह्न में जन-सभाओं का आयोजन किया गया।

१० अप्रैल १९९८ की जन-सभा में व्याख्यान का विषय था—"श्रीरामकृष्ण और अद्वैत वेदान्त। महानिर्वाणी अखाड़ा के महामण्डलेश्वर स्वामी निरंजनानन्द जी महाराज ने सबसे पहले अपने प्रवचन में कहा कि श्रीरामकृष्ण ने अपने जीवन में अद्वैत की अनुभूति प्राप्त कर ली थी, इसी से युवक नरेन्द्रनाथ—जो कालान्तर में स्वामी विवेकानन्द के नाम से विख्यात हुए और जिन्होंने सम्पूर्ण विश्व को हिला दिया- के प्रश्न—"महाशय, क्या आपने ईश्वर देखा है", का वे संतोषजनक उत्तर दे सके। महानिर्वाणी अखाड़ा के महामण्डलेश्वर स्वामी प्रेमानन्द जी महाराज ने कहा कि 'परमहंस' की उपाधि से ही स्वयं सिद्ध होता है कि श्रीरामकृष्ण स्वयं अद्वैत के प्रतीक हैं और इस तरह श्रीरामकृष्ण की अनुभूति प्राप्त करना अद्वैत की अनुभूति प्राप्त करना है। महानिर्वाणी अखाड़ा के महामण्डलेश्वर स्वामी विशुद्धानन्द जी महाराज ने

अद्वैत की अनुभूति प्राप्त करने के लिए मंत्र दीक्षा, शक्तिपात् और शाम्भवी दीक्षा के अन्तर को स्पष्ट किया। महानिर्वाणी अखाड़ा के आचार्य महामण्डलेश्वर स्वामी विश्वदेवानन्द जी महाराज ने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा कि श्रीरामकृष्ण ने किसी नये सम्प्रदाय का निर्माण केवल इसलिए नहीं किया क्योंकि वे दृढ़तापूर्वक अद्वैत में प्रतिष्ठित थे।

११ अप्रैल की चर्चा का विषय था 'श्रीरामकृष्ण और धर्म समन्वय।' महामण्लेश्वर स्वामी महेश्वरानन्द जी महाराज, महामण्लेश्वर स्वामी अखण्डानन्द सागर जी महाराज और महामण्लेश्वर स्वामी दयानन्द वेदपाठीजी महाराज वक्ता थे। महानिर्वाणी अखाड़ा के महामण्लेश्वर स्वामी काशिकानन्द जी महाराज ने सभा की अध्यक्षता की। सभी वक्ताओं ने विभिन्न धर्मों में समन्वय स्थापित करने की दिशा में श्रीराम कृष्ण के जीवन और संदेशों के महत्व की प्रशंसा की।

१२ अप्रैल की जनसभा में व्याख्यान का विषय था—"व्यावहारिक वेदान्त और स्वामी विवेकानन्द।" अग्नि अखाड़ा के आचार्य महामण्डलेश्वर स्वामी शिवेन्द्र पुरीजी महाराज तथा निम्बार्क सम्प्रदाय के आचार्य श्री श्रीजी महाराज ने अपने भाषणों में स्वामी विवेकानन्द द्वारा प्रस्तुत व्यावहारिक वेदान्त के उपदेशों पर आधारित रामकृष्ण मठ एवं रामकृष्ण मिशन के सेवा-कार्यों की सराहना की। कैलाश आश्रम के आचार्य महामण्डलेश्वर स्वामी विद्यानन्द गिरिजी महाराज ने अपने अध्यक्षीय भाषण में स्पष्ट करते हुए कहा कि जब तक कोई भी व्यक्ति श्रुति के इस कथन की अनुभूति नहीं प्राप्त कर लेता है कि 'सर्वं खल्विदं ब्रह्म" (सब में ब्रह्म व्याप्त है) तब तक वह नर की नारायण भाव से सेवा (शिव ज्ञाने जीव सेवा) वास्तविक रूप से नहीं कर सकता; तथापि साधना की दृष्टि से यह सेवा महत्वपूर्ण है।

१३ अप्रैल, १९९८ की परिचर्चा का विषय था—"ज्ञानस्वरूपिणी श्री श्री माँ सारदा देवी।" उदासीन अखाड़ा के महामण्डलेश्वर स्वामी गुरुशरणानन्द जी महाराज, रामकृष्ण मठ और मिशन, इलाहाबाद के अध्यक्ष स्वामी निखिलात्मानन्द जी महाराज एवं कनखल सेवाश्रम के स्वामी अकामानन्द जी महाराज ने श्री श्री माँ सारदा देवी के जीवन की मर्मस्पर्शी घटनाओं की चर्चा की तथा बताया कि किस प्रकार श्री श्री माँ ने जाति, धर्म और सामाजिक पद-प्रतिष्ठा को ध्यान में रखे बिना सब को मंत्र दीक्षा के द्वारा आध्यात्मिक ज्ञान प्रदान किया तथा किस प्रकार उनकी कृपा पापी और संत, दुरात्मा और महात्मा सब पर समान भाव से बरसती थी। रामकृष्ण मठ और मिशन के उपाध्यक्ष श्रीमत् स्वामी गहनानन्द जी महाराज ने अपने अध्यक्षीय व्याख्यान में आज भी भक्तों के लिए श्री माँ सारदा देवी के जीवन एवं उपदेशों के महत्व की बड़े ललित ढंग से विवेचना की।

१० और ११ अप्रैल को प्रातः काल स्वामी निखिलात्मानन्द जी महाराज के 'रामचरित मानस' पर तथा १२ और १३ अप्रैल को प्रातः काल अद्वैत आश्रम वाराणसी के स्वामी व्योमानन्द जी के "श्रीरामकृष्ण वचनामृत" पर प्रवचनों का आयोजन भी किया गया था।

रामकृष्ण मठ और रामकृष्ण मिशन के परम उपाध्यक्ष श्रीमत् स्वामी रंगनाथानन्द जी महाराज ने इस अवसर पर १४ अप्रैल १९९८ को कनखल सेवाश्रम अस्पताल के बाह्य-रोगी विभाग तथा महिला खण्ड का उद्घाटन किया।

इसके पश्चात् महामण्डलेश्वर स्वामी निरंजनानन्द जी महाराज ने व्याख्यान दिया। उन्होंने कहा कि दूसरों की भाँति श्रीरामकृष्ण ने किसी मठ या संस्था की स्थापना नहीं की, किन्तु उन्होंने विश्व को स्वामी विवेकानन्द जी महाराज के रूप में एक "जीवित संस्था" दी। उदासी पंचायत बड़ा अखाड़ा के आचार्य महामण्डलेश्वर श्री स्वामी गुरुशरणानन्द जी महाराज ने प्रश्न किया कि स्वामी विवेकानन्द ने विश्व को कौन-सी "नयी" वस्तु दी? उन्होंने यह कहते हुए स्वयं इस प्रश्न का उत्तर दिया कि स्वामाजी ने हमलोगों को सिखाया कि ईश्वर केवल मन्दिर के भीतर नहीं हैं, वे बाहर—दुःखियों, दरिद्रों और अज्ञानियों में—भी हैं।

अटल पीठ के आचार्य महामण्डलेश्वर जी स्वामी प्रकाशनन्द जी ने श्रीरामकृष्ण को 'शाक्त-शिरोमणि' कहा और संगठन की शक्ति का महत्व बताया। उन्होंने स्वामी विवेकानन्द की प्रेरणा और नेतृत्व की छाया में साधु-सम्प्रदाय को एकजुट और संगठित रहने का आह्वान किया।

आवाहन पीठ के आचार्य महामण्डलेश्वर श्री स्वामी शिवेन्द्रपुरी ने अपने लघु किन्तु किन्तु प्रभावशाली व्याख्यान में कहा कि विवेकानन्द सौ से अधिक वर्ष पुराने हो सकते हैं, किन्तु वस्तुतः 'ऊर्जा' कभी पुरानी नहीं होती और स्वामीजी मनुष्य नहीं, वास्तविक ऊर्जा थे। महामण्डलेश्वर स्वामी प्रेमानन्द जी महाराज ने दर्शाया कि भारतभूमि ने सदव हर पीढ़ी में प्रबुद्ध सन्तों को जन्म दिया हैं।

महामण्डलेश्वर स्वामी मंगलानन्द गिरिजी महाराज ने अपने व्याख्यान में कहा कि आज हमारे धर्म को विश्व-बन्धुत्व के भाव को प्रतिबिम्बित करना चाहिए, जैसा कि स्वामी विवेकानन्द ने हमें सिखाया है। हमलोग यह महसूस कर सकते हैं कि आज की अशान्त घड़ियों में हमें एक दूसरे विवेकानन्द की आवश्यकता है, लेकिन यह आवश्यक नहीं है क्योंकि विवेकानन्द हम सबके हृदय में पहले से ही विराजमान हैं।

निरंजनी पीठ के आचार्य महामण्डलेश्वर श्री स्वामी पुण्यानन्द जी ने कहा कि कोई भी राजनीतिज्ञ कुम्भ मेला में एकत्र विशाल जन-समुदाय की तरह भीड़ नहीं इकट्ठा कर सकता। केवल धर्म ही ऐसा कर सकता है। इसी प्रकार कोई भी वैज्ञानिक आन्तरिक शान्ति और आनन्द उत्पन्न करने का तरीका प्राप्त करने में सक्षम नहीं हो सका है। केवल धर्म ही हमें इन्हें प्रदान कर सकता है। निर्वाणी पीठ के श्री स्वामी विश्वदेवानन्द जी ने अपने भाषण में कहा कि साधु सम्मेलन आत्म-परीक्षण करने का एक महान अवसर प्रदान करता है। हमलोगों को स्वयं से पूछना चाहिए कि मैं कौन हूँ? हमारा जीवन किस दिशा में अग्रसर हो रहा है।

अपने अध्यक्षीय भाषण में पूज्यचरण स्वामी रंगानाथानन्द जी महाराज ने भारत की प्राचीन गरिमा के साथ ही १०वीं शताब्दी के बाद से इसके अधःपतन की ओर भी संकेत दिया। उन्होंने कहा कि ये विवेकानन्द ही थे जिन्होंने भारत को इसके अंधकार और नैराश्य से बाहर निकाला, तथा इसके प्राचीन संदेश को आज के लोगों के समझने योग्य भाषा में उद्घोषित किया। भागवत से उद्धरण देते हुए उन्होंने कहा कि ईश्वर हमारी पूजा नहीं स्वीकार करेंगे यदि हमने मानव के रूप में उनकी अवहेलना की। अपने समक्ष अद्वैत दृष्टि रखकर हमें

ईश्वर की सभी जीवों में उपासना करनी चाहिए। स्वामीजों के सन्देशों को ध्यानपूर्वक पढ़कर तथा उनके सभी धर्मों के समन्वय एवं सभी जीवों में एकत्व सन्देश को व्यवहार में उतारकर ही आज के समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार को दूर किया जा सकता है। उनके भाषण को स्वामी सत्यरूपानन्द जी महाराज ने हिन्दी में अनूदित कर प्रस्तुत किया तथा धन्यवादज्ञापन भी उन्होंने ही किया।

७ बजे शाम में सभा समाप्त हुई तथा सभा में एकत्र सभी साधुओं को सेवाश्रम में सुस्वादु एवं भव्य भोजन कराया गया तथा वस्त्र एवं दक्षिणा से सम्मानित किया गया। यह आयोजन परम सफल रहा तथा इस शताब्दी के अन्तिम कुम्भ मेला में एकत्र विभिन्न सम्प्रदायों के साधुओं के मस्तिष्क पर एक छाप छोड़ गया।

सारे समय अपने को रोगी सोचते रहना रोगमुक्ति का उपाय नहीं है; उसके लिए दवा की आवश्यकता है। दुर्बलता की बात मन में लाने से कोई लाभ नहीं होता। बल दो-शक्ति दो। और सारे समय दुर्बलता की बात सोचते रहने से बल नहीं आता। दुर्बलता पर सोच करते रहना दुर्बलता दूर करने का उपाय नहीं; उपाय है—बल की बात मन में लाना।

वेदान्त 'पाप' की बात नहीं मानता, वह केवल 'भूल' की बात स्वीकार करता है; और उसके मत से, तुम सब से बड़ी भूल तो तब करते हो, जब तुम कहते हो, "मैं कमजोर हूँ, मैं पापी हूँ, एक दुःखी जीव हूँ, मुझमें कुछ भी शक्ति नहीं मुझमें कुछ भी करने की ताकत नहीं।"

प्राचीन धर्मों ने कहा, "वह नास्तिक है, जो ईश्वर में विश्वास नहीं करता।" नया धर्म कहता है, "नास्तिक वह है जो स्वयं में विश्वास नहीं करता।"

आज हमारे देश को जिस चीज की आवश्यकता है, वह है लोहे की मांसपेशियाँ और फौलाद के स्नायु—प्रचण्ड इच्छाशक्ति, जिसका अवरोध दुनिया की कोई ताकत न कर सके, जो जगत् के गुप्त तथ्यों और रहस्यों को भेद सके और जिस उपाय से भी हो अपने उद्देश्य की पूर्ति करने में समर्थ हो, फिर चाहे समुद्रतल में ही क्यों न जाना पड़े—साक्षात् मृत्यु का ही सामना क्यों न करना पड़े।

—स्वामी विवेकानन्द

हरद्वार में साधु सम्मेलन

[गत कुम्भ मेला के अवसर पर रामकृष्ण मिशन, हरद्वार और अखिल भारतीय अखाड़ा परिषद् के सम्मिलित तत्वावधान में एक भव्य साधु सम्मेलन का आयोजन किया गया था। उक्त सम्मेलन का प्रतिवेदन रामकृष्ण मठ, चेन्नई (मद्रास) में कार्यरत स्वामी त्यागानन्द जी महाराज ने प्रस्तुत किया है। पाठकों के हित के लिए इसका हिन्दी रूपान्तर डॉ० केदारनाथ लाभ ने तैयार किया है।—सं०]

रामकृष्ण मिशन की शताब्दी का स्मरणोत्सव मनाने के सन्दर्भ में गत ८ अप्रैल १९९८ ई० को हरद्वार में साधु-सम्मेलन का आयोजन किया गया। यह सम्मेलन रामकृष्ण मिशन की हरद्वार शाखा (कनखल) और अखिल भारतीय अखाड़ा परिषद् के द्वारा सम्मिलित रूप से आयोजित गया था।

इस सम्मेलन के पूर्व रामकृष्ण मिशन सेवाश्रम के परिसर में आयोजित एक विशेष प्रदर्शनी का उद्घाटन हुआ था। श्रीरामकृष्ण, श्री माँ सारदा देवी और स्वामी विवेकानन्द के सुसज्जित चित्रों के समक्ष आरती करते हुए इस प्रदर्शनी का उद्घाटन मिशन के उपाध्यक्ष श्रीमत् स्वामी गहनानन्द जी महाराज के कर-कमलों द्वारा किया गया। चित्रात्मक प्रदर्शनी में स्वामी विवेकानन्द का जीवन प्रदर्शित किया गया था और इसमें अन्य चित्र भी लगे हुए थे जिनमें रामकृष्ण मठ और मिशन के सेवा कार्यों की झाँकी प्रस्तुत की गयी थी।

अपराह्न ३ बजे से ही विभिन्न अखाड़ों से साधुगण सेवाश्रम में खड़ा किया गया सुन्दर पण्डाल की ओर अग्रसर होने लगे। वस्तुतः अपनी विभिन्न आभाओं में यह गैरिक रंग का एक सागर था। लगभग ८०० साधु—कुछ मुण्डित मस्तक, कुछ जटाजूट धारी, कुछ पगड़ी धारण किये हुए और कुछ पगड़ी विहीन—इस सम्मेलन में उपस्थित हुए। आसानी से लक्ष्य की जानेवाली विविधता के बावजूद, सम्मेलन में एकत्र संन्यासियों को प्रेरित करने वाली तपोनिष्ठता की प्रेरणा को भी कोई भी व्यक्ति लक्ष्य कर सकता था। विभिन्न संस्थाओं और अखाड़ाओं के संस्थापक और प्रधान—जिन्हें उत्तराखण्ड में बिविध उपाधियों से पुकारा जाता है जैसे महंथ, मण्डलेश्वर, महामण्डलेश्वर आदि—सभी एक एक कर पहुँचे। रामकृष्ण मिशन के परम उपाध्यक्ष श्रद्धेय स्वामी रंगनाथानन्द जी महाराज ने सम्मेलन की अध्यक्षता की।

रामकृष्ण संघ के साधुओं के द्वारा सस्वर वैदिक मंत्रोच्चारण के साथ संध्या ४ बजे सम्मेलन का शुभारम्भ हुआ। रामकृष्ण मठ एवं मिशन के महासचिव स्वामी स्मरणानन्द जी महाराज ने एकत्र साधुओं का स्वागत किया। रामकृष्ण

संघ किस प्रकार महान दशनामी आम्नाय से सम्बन्ध रखता है इसको स्पष्ट करते हुए उन्होंने रामकृष्ण संघ की संन्यासी वंश परम्परा की रूपरेखा प्रस्तुत की। उन्होंने धर्म-समन्वय के विषय पर भी चर्चा की और कहा कि भारतीय परम्परा में एक संन्यासी सदा से सनातन धर्म का संरक्षक रहा है। उनके स्वागत भाषण को स्वामी निखिलात्मानन्द जी महाराज ने हिन्दी में अनूदित किया।

प्रथम वक्ता थे श्री जगद्गुरु काशीपीठाधीश्वर हर्याचार्य रामानन्दाचार्य जी। "हिन्दू" शब्द की व्युत्पत्तिमूलक रोचक व्याख्या प्रस्तुत करते हुए उन्होंने संस्कृत में ओजस्वी व्याख्यान दिया। तदुपरान्त दिगम्बर अणि वैष्णव अखाड़ा के महंथ श्री रामचन्द दास जी परमहंस ने अपने अभिभाषण में रामकृष्ण मिशन के सेवा कार्यों की भूरि-भूरि प्रशंसा की। उन्होंने आशा प्रकट की कि एक दिन हिमालय की चोटी पर भगवा ध्वज लहरायगा तथा एक बार पुनः भारत सही अर्थों में हिन्दू राष्ट्र बनेगा।

इसके पश्चात् महामण्डलेश्वर स्वामी निरंजनानन्द जी महाराज ने व्याख्यान दिया। उन्होंने कहा कि दूसरों की भाँति श्रीरामकृष्ण ने किसी मठ या संस्था की स्थापना नहीं की, किन्तु उन्होंने विश्व को स्वामी विवेकानन्द जी महाराज के रूप में एक "जीवित संस्था" दी। उदासी पंचायत बड़ा अखाड़ा के आचार्य महामण्डलेश्वर श्री स्वामी गुरुशरणानन्द जी महाराज ने प्रश्न किया कि स्वामी विवेकानन्द ने विश्व को कौन-सी "नयी" वस्तु दी? उन्होंने यह कहते हुए स्वयं इस प्रश्न का उत्तर दिया कि स्वामीजी ने हमलोगों को सिखाया कि ईश्वर केवल मन्दिर के भीतर नहीं हैं, वे बाहर—दुःखियों, दरिद्रों और अज्ञानियों में—भी हैं।

□

इस संसार में हो या धर्म के संसार में, यह सत्य है कि भय ही पतन और पाप का निश्चित कारण है, भय से ही दुःख-कष्ट होता है, भय से ही मृत्यु आती है, और भय से ही सारी बुराइयाँ उत्पन्न होती हैं। इस भय का कारण क्या है?—अपने स्वरूप के सम्बन्ध में हमारा अज्ञान। हममें से प्रत्येक उस 'राजाधिराज' का—उस 'सम्राटों के सम्राट्' का निश्चित उत्तराधिकारी है।

जान लो कि सारे पापों और सारी बुराइयों को एक ही शब्द द्वारा व्यक्त किया जा सकता है और वह है—'दुर्बलता'। समस्त असत् कार्यों के पीछे यह दुर्बलता ही एकमात्र प्रेरक शक्ति है। यह दुर्बलता ही सारी स्वार्थपरता की जड़ है। इस दुर्बलता के कारण ही मनुष्य में दूसरों का आघात करने की प्रवृत्ति उत्पन्न होती है। इस दुर्बलता के कारण ही मनुष्य अपने वास्तविक स्वरूप को प्रकट नहीं कर पाता।

खड़े होओ, साहसी बनो, शक्तिमान होओ। सारा उत्तरदायित्व अपने कन्धों पर लो, और जान लो कि तुम्हीं अपने भाग्य के विधाता हो। तुम्हें जो कुछ बल और सहायता चाहिए, सब तुम्हारे ही भीतर है। अतएव अपना भविष्य तुम स्वयं गढ़ो।

—स्वामी विवेकानन्द

सेवा

—स्वामी विवेकानन्द

प्रत्येक पुरुष को, प्रत्येक स्त्री को—हर एक जीव को भगवत्-स्वरूप समझो। तुम किसी की सहायता नहीं कर सकते, तुम ड़वल सेवा मात्र कर सकते हो, प्रभु की सन्तानों की सेवा करो' साक्षात् प्रभु को ही सेवा करो—जब कभी तुम्हें अवसर मिले। यदि प्रभु की इच्छा से तुम उनकी किसी सन्तान की सेवा कर सको, तो सचमुच तुम धन्य हो, अपने आपको बड़ा मत समझो। तुम धन्य हो कि वह अवसर तुम्हें दिया गया—दूसरों को नहीं। उसे पूजा की ही दृष्टि से देखो। गरीब और दुःखी लोग तो हमारी ही मुक्ति के लिए हैं, ताकि रोगी, पागल,कोढ़ी और पापी के रूप में अपने सामने आनेवाले प्रभु की हम सेवा कर सकें।

मानव-देहमन्दिर में प्रतिष्ठित मानव-आत्मा ही एकमात्र पूजार्ह भगवान् है। अवश्य, समस्त प्राणियों की देह भी मन्दिर है, पर मानव-देह सर्वश्रेष्ठ है—वह मन्दिरों में ताजमहल है। यदि मैं उसमें भगवान् की पूजा न कर सकूँ, तो और कोई भी मन्दिर किसी काम का न होगा।

अतएव प्रतिज्ञा कर लो कि तुम अपना सारा जीवन दिन पर दिन नीचे गिरते जानेवाले इन तीस करोड़ लोगों के उत्थान के लिए उत्सर्ग कर दोगे।

मैं उसी को महात्मा कहता हूँ, जिसका हृदय गरीबों के लिए रोता है; अन्यथा वह तो दुरात्मा है।

जब तक लाखों लोग भूखे और अज्ञानी हैं, तब तक मैं उस प्रत्येक व्यक्ति को कृतघ्न समझता हूँ जो उनके बल पर शिक्षित बना और अब उनकी ओर ध्यान तक नहीं देता।

क्या तुम अपने बन्धुओं से प्रे करते हो ? भगवान् को खोजने तुम कहाँ जाओगे ?—क्या ये गरीब, दुखी और दुर्बल, भगवान् नहीं हैं ? पहले उन्हीं की पूजा क्यों नहीं करते ? गंगातीर पर कुआँ खोदने क्यों जाते हो ? प्रेम को सर्वशक्तिमत्ता में विश्वास रखो। इस सब नाम-यश की कौन परवाह करता है ? क्या तुममें प्रेम है ?—यदि है, तो तुम सर्वशक्तिमान हो। क्या तुम पूर्णतः निःस्वार्थ हो ?—यदि हाँ, तो तुम अजेय हो। चरित्र ही सर्वत्र फलदायक है। यह ईर्ष्या और छल-कपट छोड़ दो। दूसरों के लिए संगठित होकर कार्य करना सीखो। यही हमारे देश की एक बड़ी आवश्यकता है। धीरज रखो और मरते दम तक निष्कपट और सच्चे रहो। आपस में मत झगड़ो। पैसे के व्यवहार में बिलकुल निष्कलंक रहो। अब तक तुममें विश्वास, सचाई और निष्ठा है, तब तक प्रत्येक क्षेत्र में उन्नति होगी। जब तक तुममें आपस में अनमोल का भाव नहीं है, तब तक, मैं विश्वास दिलाता हूँ, भगवान् की दया से तुम्हारे लिए कोई भय नहीं है। अपना हृदय तब तक न खोलो, जब तक तुम यह निश्चित रूप से न जान लो कि उससे सचमुच भला होगा। अपने बड़े से बड़े शत्रु के प्रति भी अच्छे और उपकारी शब्दों का प्रयोग करो।

रूप और गुण

विलक्षण प्रतिभा के धनी चाणक्य स्वयं कुरूप थे। चन्द्रगुप्त मौर्य को एक रोज मजाक सूझा और उन्होंने कहा, 'प्रधानमंत्री जी, क्या ही अच्छा होता, अगर आप गुणवान होने के साथ-साथ रूपवान भी होते।'

चाणक्य की बजाय महारानी ने ही उत्तर दिया, 'महाराज, रूप तो मृगतृष्णा है। आदमी की पूजा उसके रूप से नहीं, बल्कि गुण और बुद्धि से होती है।'

'आप रूपवती होकर भी ऐसी बातें कहती हैं ? राजा ने सवाल किया, 'क्या ऐसा को उदाहरण हैं जहाँ गुण के सामने रूप की कोई जहमियत न हों ?'

बहुतेरे उदाहरण भरे पड़े हुए हैं, महाराज !' चाणक्य ने उत्तर दिया, 'आप पहले ठंडा पानी पीकर शांत हो लें, फिर बातें करेंगे।' उन्होंने तुरत पानी के दो गिलास बारी-बारी से राजा की ओर बढ़ा दिये :

'महाराज, पहले गिलास में सोने के घड़े का पानी था और दूसरे में मिट्टी के घड़े का। कृपाकर आप बतायें कि किस घड़े का पानी आपको अच्छा लगा।' पानी पी चुकने पर चाणक्य ने पूछा।

राजा ने जवाब दिया, 'मिट्टी के घड़े का पानी शीतल एवं सुस्वादु था। उसे पीकर मैं तृप्त हो गया। मगर सोने के घड़े का पानी तो पीने लायक था ही नहीं। लेकिन, चूँकि पहले मुझे वही गिलास थमाया गया था, अतः न चाहते हुए भी पीना पड़ा।'

महारानी ने हँसते हुए कहा, 'महाराज ! हमारे प्रधानमंत्री ने बुद्धिचातुर्य से आपके सवाल का जवाब दे दिया। दूर से ही चमचमाने वाले सोने का घड़े की खूबसूरती देखते ही बनती है, मगर वह घड़ा भला किस काम का जिसका पानी पीने लायक हो ही नहीं। दूसरी तरफ, मिट्टी का घड़ा देखने में तो कुरूप है, मगर उसमें बहुत बड़ा गुण छिपा है। उसका शीतल-सुस्वादु जल पीकर मन तृप्त हो जाता है। अब आप बताइये, रूप बड़ा है या गुण एवं बुद्धि ?'

समाचार

रामकृष्ण आश्रम देहरादून में रामकृष्ण-मन्दिर का उद्घाटन

देहरादून: ११ मई, विगत ११ मई १९९८ (बुद्ध पूर्णिमा) को ७ बजे प्रातः किशनपुर, देहरादून में श्रीरामकृष्ण देव के नवनिर्मित सार्वजनीन मन्दिर का वैदिक मंत्रोच्चार, प्रार्थना एवं भावपूर्ण भक्ति-गीतों के बीच रामकृष्ण मठ एवं मिशन के परम उपाध्यक्ष श्रीमत् स्वामी रंगनाथानन्द जी महाराज ने विधिवत उद्घाटन किया। १६३ साधु-ब्रह्मचारियों एवं सैकड़ों भक्तों की उपस्थिति ने इस महत्तम अवसर को महिमा-मण्डित कर दिया। श्रीरामकृष्ण देव की आदम कद की संगमरमर-प्रतिमा के अनावरण ने इस अवसर को और भी पूर्णता प्रदान कर दी। भव्य मन्दिर, भीतर श्रीरामकृष्ण देव की हियहारी प्रतिमा, और पृष्ठभूमि का निर्माण करती हुई मनोरम शिवालिक-पर्वतमाला सब एकत्व और समन्वय के एक उदात्त आध्यात्मिक आदर्श में विलीन हो गये।

प्रातःकालीन मंगल-आरती के उपरान्त रामकृष्ण संघ के साधु-ब्रह्मचारियों ने श्रीरामकृष्ण, श्री माँ सारदा देवी और स्वामी विवेकानन्द के चित्रों को पुरानी वेदिका से नये मन्दिर में जुलूस के साथ कंधों पर वहन कर ले गये। फिर मन्दिर का उद्घाटन और श्रीरामकृष्ण देव की प्रतिमा का अनावरण श्रीमत् स्वामी रंगनाथानन्द जी महाराज के कर कमलों से सम्पन्न हुआ और इस प्रकार रामकृष्ण आश्रम, किशनपुर के पूर्व अध्यक्ष, स्वामी क्षमानन्द जी का विशेषतः एवं देहरादून के श्रीरामकृष्ण के भक्तों का सामान्यतः चिर आकांक्षित स्वप्न पूर्ण हुआ।

इसके पूर्व, ९ मई के अपराह्न में नगर की शिवजी धर्मशाला से एक प्रभावकारी जुलूस निकाला गया जो नगर के हृदय स्थल पैरेड ग्राउण्ड में जाकर समाप्त हुआ। घाटी के सैकड़ों प्रतिष्ठित नागरिकों और भारत के कई भागों से आये हुए भक्तों ने रैली में भाग लिया। श्रीरामकृष्ण, माँ सारदा देवी, और स्वामी विवेकानन्द की सुसज्जित जीवन्त छवि रैली की विशिष्टता थी। फिर सिखों की ओर से शबद कीर्तन और मुसलमानों की ओर से कव्वाली एकत्व का सन्देश दे रहे थे। श्रीमत् स्वामी रंगनाथानन्द जी महाराज ने समवेत लोगों को सम्बोधित किया।

१० मई, रविवार के प्रातः रामकृष्ण मठ, इलाहाबाद के अध्यक्ष, स्वामी निखिलात्मानन्द जी महाराज ने 'श्रीराम से श्रीरामकृष्ण' विषय पर प्रवचन दिया जिसमें उन्होंने बताया कि ईश्वर अपने अवतरण और लीला के द्वारा लोक-मंगल किया करते हैं। श्रीराम और श्रीरामकृष्ण दोनों ने ऐसा किया और दोनों तत्वतः एक ही हैं। तदुपरान्त श्रीमत् स्वामी रंगनाथानन्द जी

महाराज ने मन्दिर-परिसर में रामकृष्ण-विवेकानन्द भावान्दोलन को स्थायी प्रदर्शनी तथा एक पुस्तक बिक्री-केन्द्र का उद्घाटन किया। हस्त-चित्रों, भा-चित्रों, (फोटो) तथा सचित्र उदाहरणों द्वारा रामकृष्ण-विवेकानन्द भावान्दोलन को प्रदर्शनी में सुन्दर ढंग से प्रदर्शित किया गया है। प्रदर्शनी में रामकृष्ण मठ और मिशन के साथ ही रामकृष्ण-विवेकानन्द भावान्दोलन के अंग स्वरूप सारदा मठ एवं रामकृष्ण-सारदा मिशन के क्रियाकलापों को दर्शाने वाले फलकों और चित्रों का समावेश उल्लेखनीय है।

उसी दिन अपराह्न में रामकृष्ण मठ और मिशन के सहायक सचिव स्वामी सुहितानन्द जी तथा रामकृष्ण मठ, वाराणसी के स्वामी व्योमानन्द जो ने 'श्री सारदा देवी के सार्वभौम मातृत्व' पर व्याख्यान दिये। स्वामी सुहितानन्द जी ने कहा कि श्री सारदा देवी मात्र कुछ सौ शिष्यों और भक्तों की माँ नहीं थीं। वे सबकी, यहाँ तक कि पशुओं और पक्षियों की भी माँ हैं। स्वामी व्योमानन्द ने कुछ अपने निजी अनुभवों को यह बताने के लिए सुनाया कि किस प्रकार एक पाँच वर्ष के बच्चे ने जयराम बारी में और पश्चिमी जगत के निवासी ने माँ सारदा देवी में दिव्यता का दर्शन किया।

११ मई को रामकृष्ण मिशन विवेकान्द आश्रम, रायपुर के सचिव स्वामी सत्यरूपानन्दजी महाराज ने 'श्रीरामकृष्ण का ईश्वरी जीवन और संदेश' विषय पर अपने व्याख्यान में साधारण साधक और एक अवतार के अन्तर को स्पष्ट किया। एक साधक या आचार्य जिसने आध्यात्मिक साधनाओं के द्वारा मुक्ति कर ली है कुछ थोड़े-से लोगों की सहायता कर सकता है जबकि अवतार समग्र विश्व के मंगल के लिए आविर्भूत होता है। श्रीरामकृष्ण एक ऐसे अवतार थे जो मानव को चेतना के उच्चस्तर पर प्रतिष्ठित करने के लिए १९वीं शताब्दी में प्रकट हुए थे। स्वामी भजनानन्द जी महाराज ने अपने व्याख्यान में अवतार के विभिन्न पहलुओं और साधक के लिए उनके महत्व को स्पष्ट किया। सांध्यकालीन कार्यक्रम के मुख्य अतिथि इलाहाबाद उच्च न्यायलय के न्यायाधीश श्री पलक बसु ने कहा कि श्रीराम कृष्ण का संदेश उनका जीवन था। उन्होंने जो उपदेश दिये वैसा ही जीवन भी जिया।

स्वामी रंगनाथानन्द जी महाराज ने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा कि श्रीरामकृष्ण हम लोगों की आध्यात्मिकता की अवधारणाओं को नयी गहराई और नया आयाम देने आये। उन्होंने यह दिखाया कि वेदान्त को शास्त्रों के पन्नों में ही बन्द नहीं रखना चाहिए बल्कि इसको व्यवहार में लाना चाहिए। मनुष्य ईश्वर है और उसकी उपासना होनी चाहिए। उपासना को केवल मन्दिरों या मात्र कुछ अनुष्ठानों के आचरण तक ही सीमित नहीं रखना चाहिए। श्रीरामकृष्ण ने इस बात पर जोर दिया कि मनुष्य का आदर होना चाहिए और पूरी विनम्रता के साथ उसकी सेवा की जानी चाहिए। भौतिकता और सांसारिकता के इस युग में श्रीरामकृष्ण का यह विशेष सन्देश था। स्वामी रंगनाथानन्द जी ने आगे कहा कि भौतिक विकास परम आवश्यक है परन्तु हमें वहीं नहीं रुक जाना चाहिए। हमें एक दूसरे आयाम की खोज करनी चाहिए और उसका पोषण करना चाहिए, जो आध्यात्मिक है। और जब हम वह करेंगे तो जानेंगे कि हम अमर आनन्द की सन्तान हैं। स्वामी विवेकानन्द ने इस गम्भीर सत्य का उद्घोष कर पश्चिमी जगत् पर विजय प्राप्त की तथा शिकागो की धर्म सभा को विस्मित कर दिया। इस अवसर पर मन्दिर विषय पर एक रंगीन स्मारिका का विमोचन भी हुआ। मन्दिर

निर्माण की योजना में महत्वपूर्ण सेवाओं के लिए अनेक लोगों को स्मृति-चिह्न प्रदान किये गये।

१२ मई को 'रामकृष्ण मिशन के सौ वर्ष' विषय पर चर्चा करने के लिए एक विशेष सभा आयोजित की गयी, जिसमें स्वामी प्रभानन्द, शशांकानन्द और स्वामी आत्मप्रियानन्द जी ने व्याख्यान दिये। स्वामी आत्मप्रियानन्द ने 'मिशन की दृष्टि' और स्वामी शशांकानन्द ने 'विगत १०० वर्षों में मिशन की देन' विषय पर चर्चा की। स्वामी प्रभानन्द ने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा कि मिशन ने बहुत सारे कार्य सम्पादित किये हैं, विशेषकर उद्भावना के स्तर पर, लेकिन इसे अभी और भी बहुत कुछ करना है, बहुत कुछ निष्पादित करना है। उन्होंने सबको आत्मनिरीक्षण करने की अपील की कि क्या वे स्वामी विवेकानन्द द्वारा उपदेशित मार्ग का सही-सही अनुसरण कर रहे हैं? उन्होंने सेवा के आदर्श को व्यक्तिगत विकास (आत्मनो मोक्षार्थं) एवं समाज के सामूहिक कल्याण (जगद्धिताय च) के लिए साधन के रूप में ग्रहण करने पर विशेष जोर दिया। उन्होंने आगे कहा कि समाज के विभिन्न स्तरों पर उदासी और निराशा के स्पष्ट चिह्न दिखाई पड़ते हैं। तथापि हमलोगों को एक सकारात्मक भाव रखना चाहिए क्योंकि अन्धकार के गर्भ में ही प्रकाश छिपा रहता है। रामकृष्ण-भावान्दोलन के अनुयायीगण निराशा के प्रत्यक्ष वातावरण में प्रकाश की किरण हैं। उन्होंने कहा कि वे भारत के भविष्य के प्रति काफी आशावान हैं।

पूर्व में रामकृष्ण मिशन, नई दिल्ली के सचिव एवं मन्दिर-समर्पण समिति के अध्यक्ष स्वामी गोकुलानन्द ने अपने स्वागत भाषण में किशनपुर (देहरादून) आश्रम के पूर्व अध्यक्ष स्वामी क्षमानन्द की भूरि-भूरि प्रशंसा की, जिन्होंने गत वर्ष कनखल में अपने देह-त्याग के पूर्व इस मन्दिर के निर्माण के लिए अथक परिश्रम किया था। रामकृष्ण आश्रम, किशनपुर के वर्त्तमान अध्यक्ष स्वामी आत्मविदानन्द जी महाराज ने भी स्वामी क्षमानन्द जी के योग का स्मरण किया।

इस अवसर पर विभिन्न प्रकार के वाद्य एवं कंठ संगीतों का भी आयोजन किया गया था। साथ ही १८९० ई० में श्रीरामकृष्ण देव के अंतरंग पार्षद स्वामी तुरीयानन्द की स्वामी विवेकानन्द से हुई ऐतिहासिक भेंट की स्मृति में राजपुर के बौरी शिव मन्दिर में लगी एक प्रस्तर की पट्टिका का भी अनावरण किया गया।

१७ मई, १९९८ को 'नारायण सेवा' (रोगियों और दरिद्रों को भोजन-प्रदान) के साथ श्रीरामकृष्ण मन्दिर—उद्घाटन—समारोह' का सफल समापन हुआ।

—स्वराज मजूमदार

बल ही जीवन है और दुर्बलता मृत्यु। बल ही परम आनन्द है, शाश्वत और अमर जीवन है। दुर्बलता निरन्तर भारस्वरूप है, दुःखस्वरूप है। दुर्बलता ही मृत्यु है। बचपन से ही तुम्हारे मस्तिष्क में रचनात्मक, बलप्रद और सहायक विचार प्रवेश करें।

—स्वामी विवेकानन्द

एक निवेदन

भगवान श्री रामकृष्णदेव, माँ सारदा तथा स्वामी विवेकानन्द के चरण रेणु से तीर्थीकृत तथा स्वामी विवेकानन्द स्मृतिविजड़ित आकर्षण केन्द्र ज्योति लिंग बाबा वैद्यनाथ की इस पुनीत नगरी देवघर में रामकृष्ण संघ द्वारा परिचालित प्रथम शिक्षण संस्थान रामकृष्ण मिशन विद्यापीठ की स्थापना सन् 1922 में हुई। भगवान श्री रामकृष्ण देव के अन्यतम पार्षद श्रीमत् स्वामी तुरीयानन्दजी महाराज से अनुप्राणित तथा स्वामी विवेकानन्द के शिक्षादर्शों पर आधारित 75 वर्ष पूर्व प्रारम्भ की गई यह शिक्षण सस्थान आज पूरे भारतवर्ष में विख्यात है। रामकृष्ण संघ के द्वितीय अध्यक्ष परमपूजनीय श्रीमत्स्वामी शिवानन्दजी महाराज ने भविष्यवाणी की थी—'इस विद्यापीठ के माध्यम से भविष्य में बहुत महान कार्य सम्पन्न होगा, इसका भविष्य बड़ा ही उज्ज्वल है।'

विद्यापीठ के बहुमुखी कर्म-प्रवाह में आर्थिक अवस्था से विपन्न 400 छात्रों के लिए आज 'विवेकानन्द बालकेन्द्र' मुख्य इकाई के रूप में कार्यरत है जिसमें निःशुल्क शैक्षिक तथा क्रीड़ा संबंधी एवं व्यावसायिक प्रशिक्षण की व्यवस्था है। इस अनुन्नत वर्ग को ही नवीन भारत का आधार बनाते हुए स्वामीजी ने कहा था—

"एक नवीन भारत निकल पड़े। निकले हल पकड़कर, किसानों की कुटी भेदकर, मछुए, माली, मोची, मेहतरों की झोपड़ियों से। निकल पड़े बनियों की दुकान से, भुजवा के भाड़ से, कारखाने से, हाट से, बाजार से। निकले झाड़ियों से, पहाड़ों—पर्वतों को भेदते हुए।' इस वाणी को मद्दे नजर रखते हुए 'सबसे पीछे पड़े हुए, सबसे नीचे दबे हुए' वर्ग को अपने विनम्र भाव से शिक्षित करने के प्रयास में 'विवेकानन्द बाल केन्द्र' अनवरत संलग्न है।

संप्रति इन छात्रों की यथोक्त शिक्षा के लिए एक स्थायी भवन की नितान्त आवश्यकता है जिसकी अनुमानित लागत 10 लाख रुपये है। अतः रामकृष्ण मिशन विद्यापीठ, देवघर की ओर से मैं इस महान एवं पवित्र कार्य को सम्पन्न करने के लिए आप उदारचेताओं से सहयोग की महती प्रार्थना करता हूँ। इति।

निवेदक

स्वामी सुबीरानन्द

सचिव

रामकृष्ण मिशन विद्यापीठ, देवघर

नोट :—1. रामकृष्ण मिशन विद्यापीठ, देवघर के नाम से ही चेक या ड्राफ्ट भेजे जाएँ।

2. रामकृष्ण मिशन को दिया गया दान धारा 80 [G] के अनुसार आयकर मुक्त है।

भगवान श्रीरामकृष्णदेव के शिष्य
स्वामी सारदानन्दजी द्वारा लिखित
भगवान श्रीरामकृष्णदेव की बृहत् जीवनी

श्रीरामकृष्णलीलाप्रसंग

तीन खण्डों में मूल्य रु. १०५/-

भगवान श्रीरामकृष्णदेव का
अपने शिष्यगण, भक्त तथा
दर्शनार्थियों के साथ वार्तालाप

श्रीरामकृष्णवचनामृत

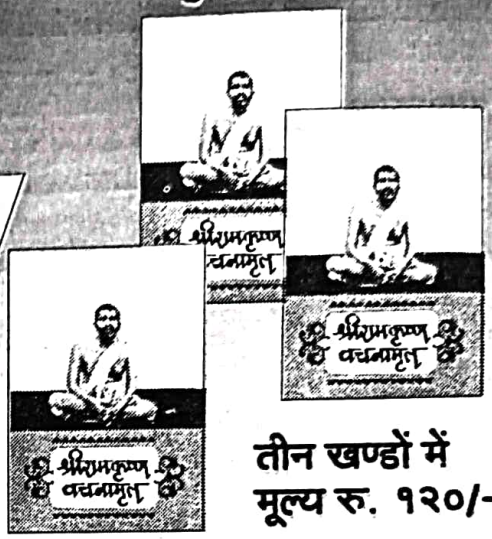

तीन खण्डों में
मूल्य रु. १२०/-

स्वामी गंभीरानन्दजी द्वारा लिखित
स्वामी विवेकानन्दजी की
संपूर्ण विस्तृत जीवनी

युगनायक विवेकानन्द

तीन खण्डों में मूल्य रु. १४०/-

स्वामी विवेकानन्द कृत योगविषयक पुस्तकें

ज्ञानयोग
मूल्य रु.२५.००

राजयोग
मूल्य रु.२०.००

कर्मयोग
मूल्य रु.१३.००

भक्तियोग
मूल्य रु.१२.००

प्रेमयोग
मूल्य रु.१५.००

अधिक जानकारी के लिए लिखें : रामकृष्ण मठ (प्रकाशन विभाग) धन्तोली, नागपुर (महाराष्ट्र) ४४० ०१२

श्रीमती गंगा देवी, जयप्रकाश नगर, छपरा (बिहार) द्वारा प्रकाशित एवं शिवशक्ति प्रिन्टर्स, सैदपुर, पटना-४ में मुद्रित।